हमारा तरफथी छपाई बहार पडेला नीचे प्रमाणे ग्रंथो तत्त्व ग्राहक पुरुषोने फक्त नीचे प्रमाणे पोस्टेज प्रथमथी मोकली आपनारने अमूल्य भेट तरीके वधारेमां वधारे एक मासनी अंदर मोकली आपवामां आवशे.

ग्रंथ मंगावनारे पोतानुं नाम, गाम, पोस्ट तथा रेलवे स्टेशन विगेरे चोकस लखी मोकलवुं. हमारा तरफथी थोडा दिवसमां एक नविन ग्रंथ छपाई बहार पडवानो छे जेमां " महोपाध्याय श्री देवचंद्रजी कृत अतित स्तवन चोवीशी " अर्थ सहित विगेरे संग्रह करेलो छे. केटलाक वखत ग्रंथो गेरवल्ले पडे छे माटे ग्रंथ मंगावनार महाशयोए ग्रंथ पोहोंचेथी अवश्य पहोंच मोकलवी जोईए.

ग्रंथनुं नाम	फक्त पोस्टेज किंमत.
श्री सुमति विलास--चालीश फारम आठ पेजी	रु. ०--५--०
श्री सुमति व्यवहार--ओगणपचाश फारम ८ पे०	रु. ०--५--०
श्री नवपद पूजादि संग्रह-पचीश फारम सोल पे०	रु. ०--५--०
श्री छ कर्मग्रंथ मूल--छ फारम सोल पेजी	रु. ०--०--६

जे महाशय ग्रंथ प्रगट थवामां मदद तरीके जे कंई रकम शुभ परिणाम युक्त भेट मोकलशे ते बीजा ग्रंथ प्रगट करवामां उपयोगी थशे अने भव्य जीवोने उपकारनुं निमित्त थशे.

ली० गांधी. नाथजी मनसुखलाल.

ग्रंथ मलवानुं ठेकाणुं,

गांधी. कोदरलाल छगनलाल.

मुकाम–वेजलपुर–जिल्ला–पंचमहाल,

स्टेशन–खरसालीया.

ते पवित्र श्रुत अनुसार मोक्षमार्गमां प्रवर्त्तनार करूणा समुद्र अनेक महान् पंडित पुरुषोए परोप- कारार्थे मोक्ष हेतु भूत सम्यक् रत्नत्रयनी प्राप्ति तथा स्थिति अर्थे शुद्ध नये साध्य सापेक्ष मुमुक्षु जीवोना चित्तने आकर्षण करनार गद्य पद्यमय अनेक ग्रंथो रची पोतानी चंद्रमा समान उज्वल कीर्त्तिने आ भूतलमां विस्तृत करी छे.

ते ग्रंथो-ते पवित्र वाणीनो स्वपर हितार्थे प्रसार करवा माटे हमोने श्रुतभक्ति अनुयायी अभिरूची प्रगट होवाथी हमारा साधर्मी मंडलना एकत्र अभिप्रायथी "श्री गौतम स्वामीनो रास मूल तथा महोपाध्याय श्री देवचंद्रजी विरचित अष्ट प्रवचन मातानी सज्झाय मूल तथा साधुनी पंच भावना मूल" प्रथम केटला ग्रंथोमां छपाएली छे ते अर्थ सहित छपाय तो वांचनार जीवोने सहजे गहन भावो समजी शकाय ए हेतुथी तेनो अर्थ मोक्ष मार्गमां प्रेरनार, करुणा सागर. "श्रीमान मनसुखलालजी" पासे करावी तेमनी आज्ञानुसार भव्य जीवोने सम्यक् ज्ञान

दर्शन चारित्रनी प्राप्ति स्थितिमां दृढ सहाय भूत, परमोपकारी स्याद्वाद वाणीना वक्ता महोपाध्याय श्री देवचंद्रजी विरचित अष्ट प्रवचन मातानी सज्झायो तथा साधुनी पंच भावना अर्थ सहित तथा प्रभंजनानी सज्झाय तथा दीवालीनुं स्तवन तथा श्रीमान् मनसुखलालजी विरचित नवपद पूजा मूल तथा अर्थ सहित तथा जिन वाणी बावनी विगेरे विषयोनो संग्रह करी "श्रीनवपद पूजाआदि संग्रह" नामनुं आ पुस्तक प्रगट करी संतुष्ट थया छीए.

आ ग्रंथ प्रगट करवामां गाम वेजलपुर निवासी गांधी मगनलाल दलसुखनी विधवा मरहुम बाई जुरी तरफथी तेना स्मरणार्थे वेजलपुर निवासी शा. छगनलाल मनसुखलाल झवेरदास तथा गांधी मनसुखलाल नरसीदास तथा गोधरा निवासी शा. छगनलाल मनसुखलाल अमरचंदए त्रण महाशयोए आ ग्रंथ प्रगट करवामां सहायता रूप रू० ४००) चारसोनी मूल्य रकम तथा गोधरा निवासी शा० नाथजी नरसीदास तरफथी तेमना स्मरणार्थे शा० छोटालाल वखतचंदे रू० १०० अंके सोनी

रकम ज्ञानना बहु मानार्थे अर्पण करी छे तेथी तेउना एवा उच्च श्रेणीना अभिप्रायने हमे कोटीश धन्यवाद आपी आभारी थईए छीए तथा तेमज वली अन्य महाशयो श्रीजिनेश्वरना पवित्र वचने फेलाववामां तन मन अने धन वडे सहाय कर एवी आशा छे.

महान् विद्वानोना रचेला ग्रंथो प्रगट करव तथा संशोधन करवानुं कार्य महान् पंडित पुरूषो छे तथापि प्रवचननी भक्तिना आवेशथी अमो अल मतिए असमर्थ होवा छतां आवा महान् कार्य करेलो मनोरथ ते श्री जिनेश्वरना अतिशय पसा निर्विघ्न पणे सफल थयो छे. तो पण हमारी अल मति तथा प्रमाद वशे जे कंई भूलो थई होय, सू विरुद्ध लखायुं होय ते माटे विद्वद्वर्ग पासे नम्र पूर्वक क्षमा मागीए छीए अने थयेली भूलो अम सूचित करवा माटे विनंति करीए छीए के जे भूलिमां सुधारवानो हमने लाभ मले.

पद. राग-भैरवी झींझोटी (लागी लगन परगुणमें जवलग) २६७
पद. राग-भैरव (क्या परने उपदेशे मूरख) २६८
पद. राग-कनडो (चेतन एकही तुं निज रिझे) २६९
गीत. (श्री वागेश्वरी वीनवुं साहेलीरे) २६९
गरवी. (ज्ञान दया मारग मूल जैननोरे) २७१
घहुंली (गुरुजी हुंशिला महारा गुरुजी खांतिला) २७२
,, (श्री जिन आणा आदरो) २७४
,, (सेवो श्री जिनवाणी भवोदधि तारणी) २७५
,, आज महारे उपाश्रये कांइ मोतीना मेह वरस्यारे) २७७
,, (मात शिवादेवी नेमजी जाया) २७८
,, (चेतन चतुरा चेती निज घर आवोने) २८१
,, (जीरे सारद मायने वीनवुंरे) २८२
,, (अमिरस चढती सुवेलडीरे) २८४
श्री महावीर स्वामीनुं पारणुं (चैत्र शुकल तेरस निर्णय) २८६
पद. १ लुं. (मने तारी वाणी प्यारी आदि निबंधा २९५

भाषा समितिनी सज्झाय १९७

एषणा समितिनी सज्झाय १९५

आदान निक्षेपन समितिनी सज्झाय २०१

पारिष्ठापनिका समितिनी सज्झाय २१०

मनोगुप्तिनी सज्झाय २१६

वचन गुप्तिनी सज्झाय २२३

काय गुप्तिनी सज्झाय २२७

उपसंहारनी ढाल नवमी २३१

कलश २४२

श्री प्रभंजनानी सज्झाय २४६–२५५

ढाल १ ली २४६

ढाल २ जी २४८

ढाल ३ जी २५

श्री दीवालीनुं स्तवन २५३

श्री साधुनी पंच भावना अर्थसहित ३१२–३६१

मंगलाचरण दोहरा ३१२

श्रुतभावना ३१५

तपभावना ३२१

सत्त्वभावना ३२६

एकत्वभावना ३३०

३४६
सुतत्वजावना ३५६
ढाल ठठी ३६०
कलश

संतोकचंदजी कृत विषयानुक्रम.

श्री रूपजदेव स्वामीनुं चैत्यवंदन (द्रुत विलंवित २७७
ठंद २७९
श्री सुमतिनाथनुं चैत्यवंदन शिखरणी ठंद २९०
श्री शांतिनाथनुं चैत्यवंदन इंद्रवज्रा ठंद २९१
श्री गुरू गुण वंदन विषे. शार्दूलविक्रिडीत ठंद २९२
श्री न्याय वखाण. हरिणी ठंद २९२
श्री विमलनाथ चैत्यवंदन. वसंततिलका ठंद २९२
द. राग-गजल (श्री जैन येन सुगति देन २९३
सुगुरूसें लहा) २९४
दोहरा (एक चित्ते एक ध्याने जिन गुण गावो) २९४
द. (जिन आणा सेवो) २९५
द. (सुसंगी सुसंगी सुरंगी) २९६
रवी. (पूरण उपकारी गुरूजी आजे मल्यारे) २९७

पद. (शांति जिनेश्वर शांत दिवाकर) ३००
पद. (श्री जिनवीर प्रभु, तुज शासन उपकारी) ३०
घहुंली. (जीरे अंग उलट अपारथी) ३०
पद. (ज्ञान सिंधु जिन वदनथी वचामृत
वृष्टि थई) ३०

वेहेन कस्तुरां कृत विषयानुक्रम.

पद. हरिगीत छंद (पंचे प्रमाद कषाय चउ) ३०
पद. हरिगीत छंद (शुद्ध न्याय ज्ञान दया मयी) ३०
सवैया तेवीसा ३०
मल्लिनाथ जिन स्तवन (शिखरणी छंद) ३०
पद. राग-सोरठ (मोहि शरण मिल्यो) ४०
पद. राग-गजल (अनंत ज्ञान सुख निदान) ४०

बेहेन समरत कृत विषयानुक्रम.

घहुंली (नमु ज्ञानी गुरु जग त्राता) ३१
श्री गौतम स्वामीनो रास अर्थ सहित ३६२—३९

ग्रंथनुं शुध्दि पत्र.

पान	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
२७	१६	सधुणा	सनुणा
२७	१०	सधुणा	सनुणा
३५	१	परम गुरुत्म	परम गुरुत्य
३५	१५	अधंकार	अंधकार
४५	०	जतुं	जंतु
४०	१४	शने	अने
६२	२	पडिचायणा	पडिचोयणा
६४	०	तारवालाला	तारत्रावाला
६४	११	वतावेलो	वतावेलो
७३	१	उतसर्गमा	उत्सर्गमां
७३	५	उनर्मागर्थी	उन्मार्गथी
७४	६	यतिधम	यतिधर्म
ए१	१	ध्यानमा	ध्यानमां
ए५	१	थोडी वारमा	थोडी वारमां
ए५	११	विवक	विवेक
एए	१०	तत्त्वना	तत्त्वनो
१०३	३	याप छे	थाप छे

१२४	४	अथात्	अर्थात्
१३१	१८	ईंद्रिययादिक	ईंद्रियादि
१३४	१९	ग्राहंकता	ग्राहकता
१३९	८	से	ते
१४०	१७	रा	राय
१४९	१	जमे	जेम
१५२	७	अवर्ण	आवर्ण
१५६	१	क्षात्यादिक	क्षांत्यादि
१५६	९	ब्रह्मचर्य	ब्रह्मचर्य
१५६	१२	नहीं	नहीं
१६०	१०	रहीए	रहिए ते
१६१	१	क्षात्यादिक	क्षांत्यादिव
१६४	१९	सघ	संघ
१६५	१	थलमा	थलमां
१७१	७	पद्गल	पुद्गल
१७२	१८	तृप्तिपवंत सहित	तृप्तिवंत रहे
१७२	१९	कामना रहिए	कामना सहि
२१४	१७	परिहस्ता	परिहरता
२३३	५	संचय	संयम
२६१	१९	म्हरो	म्हेरो

आतम तत्त्वमां ॥ सहु पुद्गलोनो राग छूटे, सहजथी शुभ ध्यानमां ॥ २ ॥ शुद्ध तत्त्वना निरधार विण किम, राग परपदनो टले ॥ शुद्ध तत्त्वना निरधार करतां, मार्ग मुक्तिनो मले ॥ शंकादि पंचे दोष टाले, शक्ति भाले आतमनी ॥ कुध्यान अध्यवसाय नाशे शुद्धि लहि परमात्मनी ॥ ३ ॥ निजात्म रुपे आतम जोवे, खांति आदिक उल्लसे ॥ निज आतम लब्धि वीर्य प्रगटे, ध्यान थिरता अतिरसे॥ संकल्प ने वी- कल्प नाशे, तत्त्व भासे शाश्वता ॥ परमेयथी परमाण साधे, द्रव्य गुण भासे छता ॥ ४ ॥ समकीत विण सवि अंध धंधो, क्रिया क्लेश कुमति करे ॥ सम- कीति साचो मार्ग साधी, सहज शिव संपति वरे ॥ समकीत विण अनुष्ठान शून्यज, समकीत साचो अंक छे ॥ निज आतमथी अभेद दरशन, निशंकने निर्वंक छे ॥ ५ ॥ शुध दरशणे सुत अर्थ लाधे, सूख साधे सिद्धिनुं ॥ घनघाति चारे नाश होवे, स्वपद प्रगटे निद्धिनुं ॥ देवादि रिद्धि सहज आवे, दुलह सम्यक बोध तो ॥ मनमृग गुरुथी दरस लहिने, धर्म साधनो ॥ ६ ॥

उदार ॥ दर्शन० ॥ ६ ॥ अनिहांरे ए विण ज्ञान न
चरण छे रे ॥ शून्य क्रिया कष्ट कलेश ॥ अनिहां
ए विण सर्वे निज छंदता रे, परपरिणति वि
आवेश ॥ दर्शन० ॥ ७ ॥ अनिहांरे मोह प्रकृ
सात उपशमे रे, अथवा क्षय उपशम होय
अनिहांरे तिम ए सातना क्षय थकी रे, निज रू
आतम जोय ॥ दर्शन० ॥ ८ ॥ अनिहांरे जाय श
जरू रागनी रे, वधते निज अनुभव रंग ॥ अ
हांरे सम संवेगादी उल्लसेरे, जस सडसठ भे
अभंग ॥ दर्शन० ॥ ९ ॥ अनिहांरे शिव सत्ता नि
साधवारे, रुचि होय अधिक उमेद ॥ अनिहांरे स
करणी आतम प्रशस्तथी रे, साधे शिवमार्ग अखे
॥ दर्शन० ॥ १० ॥ अनिहांरे शुद्ध देव गुरू धर्म
रे, परखे जाणी स्याद्वाद ॥ अनिहांरे निश्च
समकित ने लहेरे, लहे सायक जाय विषाद
॥ दर्शन० ॥ ११ ॥ अनिहांरे दरश अरूपी गु
आतमनो रे, पामे आवे भव अंत ॥ अनिहांरे म
गुन शील सुंदरि वरे रे, लहे परमाणंद अत्यंत
॥ दर्शन० ॥ १२ ॥

यने ॥ सवि ज्ञेय ज्ञायक सिद्धि लायक, लखे कृत्य अकृत्यने ॥ खटकाय रक्षा ज्ञान विण किम, शुं तजे शुं आदरे ॥ निज ज्ञान विण जग भर्म भूल्यो, चार गति दुःखमां फरे ॥ ३ ॥ भव पापने संताप कापे, राज सहज दिए छतुं ॥ पण ज्ञानमां सुतज्ञान दाता, शुरू चरण रहे छतुं ॥ जिन धर्मनुं छे मूल समकीत, तेहनुं पण मूल ए ॥ भव ज्ञानने अनुकूल सुत छे, परमधर्म अमूल ए ॥ ४ ॥ संसार तारण सिद्धि कारण शांति दे दुःख भय हरे ॥ भव वास खोटी आश तर्जे बुध, ज्ञानमां प्रीती करे ॥ उपगारी निज पर सदागम, सम शशि मेह रवी परे ॥ सवि विप टाले मोह वारे, परम निवृत्ति शिववरे ॥ ५ ॥ शु ध्येयने पण ज्ञानी जाणे, साधना मारग लहे ॥ अ ज्ञान मिथ्या तिमिर हर रवी, ज्ञान गुण गण संग्रहे असाध्य वलि शुध साध्य जाणे, सिद्धि पामे ते न ॥ निज तार तारे भविक जनने, धन्य पूरुष ते भवा ॥ ६ ॥ मुल भेद पंचे ज्ञानना, अठवीश मतिना कह्या ॥ दश चार वलि विश सूतना ख अवधि असंख्या कह्या ॥ रजु विपुल छे मन ना पर्यवी, केवल एक उदार छे ॥ पन्नास एक सुज्ञा

प्रगट होय, ज्ञान सदा जयकारी ॥ आतम० ॥ ५ ॥
ज्ञान थकी खट द्रव्यने जाणे, मार्ग कुमार्ग विचार॥
हेय उपादेय ज्ञाने लहिये, बूझे सार असार ॥
आतम० ॥ ५ ॥ ज्ञाने भाव अनंत लखे जिय
पामे निज अधिकार ॥ परपद अधिकारी नहि चेतन
ते तजे जाय विकार ॥ आतम० ॥७॥ ज्ञाने घनघाति
दल नाशे, प्रगटे सिद्धि अनंत ॥ वस्तू गुण परजाय
अनंता, भेद अभेद लहंत ॥ आतम० ॥८॥ निज गुण
पज्जव सहज अनंता, जाणे शुद्ध स्वतंत ॥ परम नि
वृत्ती पदवी पामी, पामे सूख अत्यंत ॥ आतम० ॥९
सिद्धि साधन लक्षण ज्ञानज, ए विण जूठी किरिया
ज्ञान विना बहु दुःख दावानल, सेवि ज्ञान भा
तरिया ॥ आतम० ॥ १० ॥ स्वपर दया किम हो
ज्ञानविण, किणविध संजम राखे ॥ अग्नि कषाय
किणविध बूझे, अनुभव रस किम चाखे ॥ आतम
॥ ११ ॥ पंच ज्ञानमां जेह सदागम, निज पर
हितकारी ॥ चार ज्ञान पण एहथी प्रगटे, ज्ञा
नीनी बलिहारी ॥ आतम० ॥ १२ ॥ रवि शशि
सरषो जगजनने, ज्ञान सदा उपगारी ॥ मुनिप
... ज्ञाने कहिए, गुरु जिन वचन विचारी

आंकणो ॥ १ ॥ राज तजी खट खंडनुं रे,
पण आराधि ॥ सलुणा ॥ परमातम संपत्ति लही
पाम्या सहज समाधि ॥ सलुणा ॥ जेम जेम० ॥२
आश्रव द्वार निरोधतां रे, नावे कर्म कलंक ॥ सलुण
पूरव संचित निर्झरे रे, चरणे कर्म निशंक॥सलुण
॥ जेम जेम० ॥ ३ ॥ रम्य रूप निज आतममां
रमीए छंडी प्रमाद ॥ सलुणा ॥ गुण अनंत प्र
तदा रे, जाय कर्म वरु व्याधि ॥ सलुणा ॥
जेम० ॥ ४ ॥ परपद ममता परिहरे रे, टाले रा
रोष ॥ सलुणा ॥ सकल कषायना नाशथी रे,
शांति रस पोष ॥ सलुणा ॥ जेम जेम० ॥ ५ ॥
दधि पार उतारवा रे, चरण अखंडित जहा
॥ सलुणा ॥ लावे आतम भूमिमां रे, दे सत्ता
राज ॥ सलुणा ॥ जेम जेम० ॥६ ॥ हिंसादि अ
पापमां रे, रमण त्रिजोगनुं जेह ॥ सलुणा ॥
निवृत्ति पद थकी रे, विरति कहे जिन एह ॥सलु
जेम जेम० ॥ ७ ॥ रंकयकां पण आदरी रे,
गय महागय ॥ सलुणा ॥ परम पूज्य पद पा
रे, सत्य चरण महिमाय ॥ सलुणा ॥ जेम जेम
॥ ८ ॥ सर्वो निर्मल उपजे रे, नाशे सकल अ

नाशे भव भ्रम भीत ॥ सलुणा ॥ १६ ॥
लेश्या सवी तजी रे, नवि रमता वन मोह॥सलुणा॥
उपसर्गादि भय तजी रे, करे गुण श्रेणि आरोह ।
सलुणा ॥ जेम जेम० ॥ १७ ॥ सिद्ध समो नि
रूपमां रे, दृढ धरीए उपयोग ॥ सलुणा ॥ मनसु
आनंदपूरमां रे, विलसे शिव घर भोग॥सलुणा॥ १

॥ काव्यं ॥ शार्दूलविक्रिडीत वृत्तम् ॥

॥ चारित्रं शरणं संघ सरवने, दुख्खं हरं तारणं
आणे पार भवोदधीथि थलमां, छे ए जहाजं परं
रंकोने थिर राज आपि परमं, साचुं महा नि
॥ सेवुं हुं थिरता धरी अकलमां, पामुं पदं सि
॥ १ ॥ इति चारित्रपद पूजा समाप्त ॥

॥ अथ श्री नवम तपपद पूजा प्रारंभः

॥ हरिगीत छंद ॥ मात्रा अठावीश ॥

॥निज ज्ञान दरशन चरण तृप्ते, इंद्रि भोग इहा ट
तप तेह श्री जिनराज दाखे, कर्मदल इंधण ज
मति [illegible] निजपद सिद्धि होवे, राग तजि ।
[illegible] ॥ जे मोह वनमांही न भमता, आतम

अनंग आतम, धरो एक विवेक ए ॥ मनसूख निज
पद सिद्धि पावे, अचल कमला संग ते ॥ ६ ॥

॥ पूजा ॥ ढाल ॥

॥ श्रुतपद नमीए नावे नविया ॥ ए राह॥

॥ तपपद सेवो निज गुण मेवो, सहज सतृ
अथाहजी ॥ पुद्गल नोग इहा निरोधे, तप दाख्यो
जगनाह ॥ तप पद सेवोने, तप तलवारे करम द
छेदो, तप मंगल सुखदाय ॥ तप० ॥ ए आंकणी
१ ॥ नोग धरम आतममां शाश्वत, जो निज नो
न जाणेजी ॥ पुद्गल गुण पज्जवने नोगे, सि
तृप्ति माने ॥ तप० ॥२ ॥ पर क्षेत्री अथिर छे पुद्ग
नोग तृप्ति किम होवेजी ॥ पुद्गल नोगे तृ
वाधे, तेणे नोगातुर होवे ॥ तप० ॥ ३ ॥
अनेद इच्छा निरोधे, बहिरंतर विधि बारजी ॥
जर पेरे अडकर्म मूलने, छेदे तप सार ॥ तप० ॥
त्रिकालिक जे कर्म कषायने, तीव्र तपे करि बालेज
निकाचीतपणे बांध्यां पण, परम क्षमाधर गाले॥तप
५॥ निजगुण तृनिवंन पुरुषने, आरत रूद्र न आवेज
[illegible] असंख्य मोहना, निज रमणे [illegible]

॥ कलश ॥

गायो गायो रे महावीर जिनेश्वर गायो ॥ए राह॥

॥ गायो गायो रे नवपद महिमा इम गायो
नव पदमां एक शुद्धातम छे, नव पद आत्म समायो,
भेद अभेद लखीने भवि जन, कर्म कलंक नसाय
रे ॥ नवपद० ॥ १ ॥ तन्मयताए नवपद सेवं
आतम रमण रमायो, कर्म शत्रु सघला क्षय होव
रीझे आतम रायो रे ॥ नवपद० ॥ २ ॥ नययु
नवपद गुण गातां, मोह मिथ्यात विलायो ॥ दुरि
दोष भय सकल नशावी, सहजानंद सोहायोरे
नवपद० ॥ ३ ॥ दोहद ओगणीस चोसठ फाल्गु
धर्म शुक्ल मन आयो ॥ कृष्ण त्रीज मनरंग उल्ला
अनुभव रस उलसायोरे ॥ नवपद० ॥ ४ ॥ गां
कोदर जिन मग प्रेरक, आग्रह साह्य सुहायो
नवपद गुण पल्लव थिर ध्याने, ध्यातां शिवम
पायोरे ॥ नवपद० ॥ ५ ॥ शासन उन्नति अर्थे र
में, जन मन हर्ष उपायो ॥ आतम भावे वीर
कोर्ती, मनमुख शिवरस पायोरे ॥ नवपद० ॥ ६ ॥

॥ इति नवपद पूजा संपूर्ण ॥

सम्यक् चारित्र आपी आत्माने पूरण सिद्धि आपनारी परम हितकारी ठे. जेनी देशनाथी नविजीवो सम्यक् ज्ञान पामी आत्म शुद्धता धारे आदरे॥ १ ॥

॥ त्रिजगत हितकारी, मोह मिथ्यात हारी ॥
॥ अखलित वर नाणं, केवलं दर्श धारी ॥
॥ चरण विरज पूरे, आतमाणंद कारी ॥
॥ दुविध धरम दाखे, मोक्ष मार्गाधिकारी॥२॥

अर्थः—परमेश्वर मोह अने मिथ्यात्वना नाश करवावाला अने त्रणे जगत्ना जीवोने हितकारी ठे जेने अप्रतिहत प्रधान केवलज्ञान, केवलदर्शन अप्रतिपाति अनंतु उपज्युं ठे जे क्षायक चारित्रनी परम स्थिरता पाम्या ठे जेनुं अनंत वीर्य सर्व प्रदेशे परम अचल प्रगट थयुं ठे. स्वपर आत्माने आनंदकारक ठे. साधु साध्वीनो, साधु श्रावकनो, द्रव्य भावथी, उत्सर्ग अपवादथी, कारण कार्यथी, निश्चय व्यवहारथी, ज्ञानथी, क्रियाथी, श्रुतधर्म तथा चारित्र धर्म, अध्यात्मधर्म अने बाह्यधर्म एम बहुविधे बे बे प्रकारे धर्मना प्ररूपवावाला ठो. मोक्षमार्ग चलाववाना अधिकारी ठो ॥ २ ॥

रूप दुरित नव भ्रमणनुं कारण ते वेगली नशावे. परमेश्वरनी आज्ञा मन वचन काया थिर करी ध्यानमां थिरताए सेवे ते शुक्ल ध्याननी थिरता पामी चारे घनघाती कर्म क्षय करे. जे पुरुष मनमां सुखे आनंदे परमेश्वरनी आज्ञा सेवे ते शाश्वत आनंद पामे ॥ ४ ॥

॥ पूजा ॥ ढाल ॥

नमो रे नमो श्री शेत्रुंजय गिरिवर ॥ए राह॥

॥ जिन अरिहा केवली पद पूजो, परम समाधि भोगीरे ॥ सम्यक ज्ञान तीन युत जन्म्या, माय मिथ्यात निरोगीरे ॥ समरस अमृत नयण कचोलां ॥ ए आंकणी ॥ १ ॥

अर्थः—रागादिक शत्रुओने जीत्या माटे जिन, ज्ञानावरणादिक चार घनघाती कर्म रूप अरिनो अंत आण्यो माटे अरिहंत, वली संसारमां भवपणे ऊगवुं नथी माटे अरुहंत, दर्शन ज्ञानादिक गुण निर्मल थया माटे केवली, तेमना चरणकमल प्रते पूजो अथवा ते अरिहंत भगवंतनी आज्ञा आदरो— [illegible] अरिहंते जेम रागादिक शत्रुओनो अंत

प्रीती करनारो परम पूज्य मने अत्यंत प्यारो छे. जे
जन्मथी चार अतिशय अने घाती करम खपाव्याथ
अगीआर अने देवकृत ओगणीश एम सर्व मळ
चोत्रीश अतिशयवंत छे. अगीआरमा गुणठा
णाना उपशांत जिन, बारमा गुणठाणावाळा क्षाय
जिन अने तेरमा गुणठाणावाळा सजोगी जिनोम
इंद्र अने ईश्वर सरखा छे. संसारी जीवने भयंक
संसार समुद्रथी तारी उद्धार करनार छे ॥ २ ॥

॥ अड प्रातिहारज वार गुणे गुणी, प
त्रीश गुणयुत वाणीरे ॥ स्याद्वाद अमृ
घनधारा, वरसावे सुख खाणीरे ॥समरस०॥

अर्थः—आठ महा प्रातिहार्यनी शोभा अने व
गुणे गुणवंत छे. जेनी वाणी सकल दोष रहित अ
पांत्रीश गुणे सहित भवि जीवोना श्रवण अने
नोने परम आल्हाद उपजावनारी उदयथी अ
तारथी सर्व दुःख दोष नाश करनारी परम सिद्धि
कारण छे. वळी जेनी वाणी षड्द्रव्य अने नव
तत्त्व आदिने चार निक्षेप सात नये बहु प्रमाणे स्
द्वाद सहित बतावनारी छे ते जाणे अमृत धार

खाता जीवोने अढार हजार शिलांगना दृढ पाटीआं वाला चरण जहाजमां बेसाडी किनारे लावो छो माटे परम निर्यामक छो. भव अटवीमां भूलेला जीवोने उन्मार्गथी मार्गेवाली संघरुप साथ मुक्ति नगरे चलावो छो माटे महासथ्थवाह छो. पृथ्वी उपर जनपदमां विचरी भविजीवोने मोक्षरुप अगम अगाध फल आपो माटे जंगम सूरतरु सरखा छो ॥ ५ ॥

॥ परम प्रमोदी परम दयालु, महामाहण
उपयोगीरे ॥ परम प्रमोदना दायक भविने
वेद रहित शिव भोगीरे ॥ समरस० ॥ ६ ॥

अर्थः—पोते परम प्रमोदवंत छो. निजात्म रू
अणजाणता पुद्गल ममत्वे अनंत प्रकारे दुः
सहेना जीवोने सहज स्वतंत्र अखंडित अनंत आ
नंदमय आत्म स्वरूप बतावी दुःखथी छोडावो छो
माटे परम दयालु छो. कोईना द्रव्य भाव प्राणने हण
नहि अने माहणताना उपदेश करो छो वली गण
धरो आचार्यो मारफत माहणताना उपदेशनो प्रवा
वधारो छो माटे महामाहण छो. आत्म शुद्ध अनं
पदार्थमां सदा उपयोगवंत छो. भविजीवोने ज्ञा

त्म ज्ञाने रहि एक ताने ॥ चारे अनंता भवि
पूर्ण पावे, सेवो जिनोने भव भीति नावे ॥१॥

॥ इति प्रथम अरिहंतपद पूजा समाप्त ॥

॥ अथ द्वितीय सिद्धपद पूजा प्रारंभः ॥

॥ मालिनी वृत्तम् ॥

॥ वद्दु विनयथि वंदू, सिद्धने सिद्धि दाता ॥
॥ सुख अमित अनंते, शातिमां छेक राता ॥
॥ शिव अवय अयोगी, लब्धि पंचे प्रकाशी ॥
॥ गइ सकल उपाधी, जे अनंगी अनाशी ॥१

अर्थः—अनंता सिद्धने परम विनयथी वंदु छुं
आत्म सिद्धिना दातार छे जे अमाप अनंत सु
शांतिमां शाश्वत समय रक्त छे. जेनुं सुख वापर
भोग भोगवतां (अवय के०) खूटे एवुं नथी. वळ
सिद्ध भगवंतनुं अंग अने सुख सदा उपद्रव रहि
छे. जेने मनवचन कायाना योगनी अने कोई प
प्रकारना पुद्गल भोगनी योग्यता नथी अने ते पु
गल भोगनी गरज पण नथी. जे पोताना वीर्यगु

अनंतानंत ॥ मन रढ लागी छे ॥ भगवंताजी ॥ द्रव्यादि चउ भेदथी ॥ जय० ॥ निरमल ज्ञा-नानंद ॥ मन० ॥ १ ॥

अर्थ—अनंत आनंदमय अने जयवंत भगवंत श्री सिद्ध अनंतानंतने वंदन नमस्कार करुं छुं. माहरु मनमां सिद्ध स्वरुप पामवा रढ लागी छे. सिद्ध भगवंत स्वद्रव्य क्षेत्र काल अने भावथी सर्वे प्रकारे निर्मल ज्ञानानंदमयी छे ॥ १ ॥

॥ रम्य रमा निज सहजमां ॥ जय० ॥ रमण रमता राम ॥ मन० ॥ परम निवृत्ति पद वर्युं ॥ जय० ॥ अविचल शाश्वत धाम ॥मन०॥२॥

अर्थः—पोतानी सहज ज्ञान दर्शनादि रम्य मनोहर रमामां रमण परिणामे रमता आरामी छो. वळी परम निवृत्ति पद रूप अविचल शाश्वत स्थानक पाम्या छो ॥ २ ॥

॥ अष्ट गुणातम मुख्य छे ॥ जय० ॥ गुण गण मगट अनंत ॥ मन० ॥ वति परजाय

गुणोने कायम राखो छो तथा कारण कार्यपणे प्रवर्तावो—फोरवो छो ते अनंतवीर्यलब्धि छे. एम पांचे लब्धिनो सर्व समय सद्भाव छे अने तमारे उपद्रव रहित आत्मीक भोग छे. तमारा अनंत गुण पर्यायो परवस्तुना योग—अपेक्षा विना सर्व समय निज परिणामीकताए विना प्रयासे खट्कारकपणे परिणमे छे.

॥ पूरण परमाणंदमां ॥ जय० ॥ अनंत शांति पद लीन ॥ मन० ॥ अव्याबाधित सुखमय ॥ जय० ॥ निज धन अक्षय पीन ॥ मन० ॥ ५ ॥

अर्थः—पूरेपूरा परमाणंदमय अनंत शांतीपदमां लीन छो तमारुं आत्म अंग अने गुणपर्याय सदा अबाधित सुखमय छे अने तमारुं धन क्षय रहित अने पुष्ट छे ॥ ५ ॥

॥ आत्यंतिक सुख भोगमां ॥ जय० ॥ लेश्या वर्ण न ज्ञान ॥ मन० ॥ त्रिभुवन मुगट शिरोमणी ॥ जय० ॥ जग जश कीर्त्ती विख्यात ॥ मन० ॥ ६ ॥

अर्थः—अंत रहित सुख भोगमां वर्त्तो छो तमारे लेश्यादि वर्णादि अने ज्ञान आदि नथी. वळी

सारंग मल्लार आदि राग सांभल्या वली मशरू मखमल आदि विविध प्रकारनां शयन आसन सेव्यां ए वात घरवालांना समज्यामां आवी नहीं तेथी ते बोल्या के एमांथी एकाद हमोने प्रत्यक्ष देखाड पछी तेने खाजां बदले गोबर लावी खाजां सरखा खाजा पाडी बताव्युं के आवां खाजां में खाधां त्यारे घरवाला बोल्या थू थू. त्यारे सुतरफेणीनो रंग जणाववा सफेद तीरीओ पथ्थर बताव्यो त्यारे ते घरवाला बोल्या के आनाथी तो दांत पडी जाय एटले पेला प्राकृत माणसने पोताना भोगवेला भोगनो अनुभव हतो पण वचनथी बतावी शक्यो नहीं तेम केवली भगवंत सिद्धना सुखनो अनुभव छतां वचने करी बतावी शकता नथी ॥ ७ ॥

॥ विनावरण चिद्ज्योति छे ॥ जय० ॥ विरमी सकल उपाधि ॥मन०॥ आमय आकुलता नहीं ॥ जय० ॥ प्रगट अनंत समाधि ॥मन० ॥ ८ ॥

अर्थः—कर्म आवरण विना प्रगट ज्ञान ज्योतिमय छे. सकल उपाधि नाश थइ तेथी पूरण विराम पाम्या छे कोइ प्रकारनो रोग मल तथा कोइ प्रका-

राज अनंत ॥ मन० ॥ त्रिभुवन नाटक देखता ॥ जय० ॥ निरमल पज्जव शांति ॥ मन० ॥ ११ ॥

अर्थः—प्रभुजी तमे परम पूरण शुद्ध प्रभुतामयी छो तमारे सत्ताभूमिनी रिद्धि अने राज्य अनंत छे सर्वे समय त्रणे भुवनना नाटक देखवावाला निर्मल स्वपर्यायमां आनंदित शुद्ध पर्यायवंत छो ॥ ११

॥ पूरण व्यक्तिवंतने ॥ जय० ॥ जाणी ध्यावे जेह ॥ मन० ॥ निज गुण सिद्धि पद वरे ॥ जय० ॥ मनसुख शिववर तेह ॥ मन० ॥ १२ ॥

अर्थः—तमने—पूर्ण व्यक्तिवंतने निश्चय संवेद ज्ञाने जाणी जे भवि ध्याय ते स्वगुण सिद्धिपद व मनमां सुखे तमारुं शुद्धपद ध्यातो जीव शिव स्त्रीन कंत थाय ॥ १२ ॥ संपूर्ण ॥

॥ काव्यं ॥ इंद्रवज्रा वृत्तम् ॥

॥ ज्ञानादि गुणाढ्य न कर्म दोषं, अत्यंत स्वानंद मवाप्ति पापं ॥ सिद्धं नमो नित्य शुधात्म नामी, हेस्यां न जानी न कर्मी न योगी ॥ १ ॥

॥ इति द्वितीय सिद्धपद पूजा समाप्तः ॥

नविजीवोने शिवमार्गमां लाववा चोयणा के० प्रेरणा करे पमिचायणा के० बहु प्रकारे प्रेरणा करे अने पोताना शिष्यो पासे पण प्रेरणा करावे अने शिवमार्गे चलावी संसारथी तारे. जीवोनो मिथ्यात मोह अने चरण मोह नशावे. एम क्लेश नशावी आत्म शुद्धताना परम बोधना दातार होय. नवथी वीहीता परम धैर्यवंत वीर्यवंत शिवपदमां उमंगी एवा आचार्य नगवंतने हे शुद्ध मनवाला नविओ! आपणे पण शिवपदनो उमंग राखी सेवीए ॥ २ ॥

॥ परवादि जीपे सुज्ञान दीपे, चरण शि
रता अनुनवे ॥ जिन समय पूरा सुनय सनुर
संघ जन थिर करि ठवे ॥ पंचे प्रस्थाने अ
तमाए, रोग शोग नये हरे ॥ नव तीना
अष्टकर्म छेदी, सहज शिव संपति वरे ॥ ३

अर्थः—जे मोटा देदीप्यमान ज्ञाने करी शोभा अनेक परवादिओने जीती जिनशासननी जय क जिनशासननो प्रनाव वधारे छे अने पोते पोता शुद्ध चरणाचरणमां स्थिरता अनुनवे छे. जि आगमो सिद्धांत जाणवा माटे पूरा छे नय परसम

करनां वचन मरज्यादिना कपट रहित सम-शु वचने भविजीवोने मोक्षमार्ग साधवानो प्रतिबो आपवावाला छे. स्याद्वाद वचने पंचास्तिकाय छ द्रव्य अने नवे तत्वनुं चार निक्षेपे सात नये स्वरू देखाडी मोक्ष मार्ग प्ररुपे छे वली संजम कामे स्या द्वाद वचने बोले छे. पर वस्तुथी उदासिन्नता धा पोतानी शुद्धात्म शक्ति शुद्ध करे छे वीहामणा भ समुद्रथी तारवावाला, साधु साधवीओना गछ धारण करी राखवावाला अर्थात् गछना परम आधा जगत्मांहे प्रधान पुरुष एटले आचार्य समा बीजो कोई दयाल नथी जे तीर्थंकरनो बतावे सुधो मार्ग पोते चलावे छे ते परम दयाल मुनि ओना इश्वर छे. मनसुख कहे छे एहवा आचार्य ते परम सुखना दातार छे. एहवा सुरीश्वरने वंदी माह सहज सिद्धिपद वर्ण ॥ ४ ॥

॥ पूजा ॥ ढाल ॥

भव दधिना प्रजिने पोपट करियेरे ॥ ए. राह ॥

॥ सुरिश्वर दुर्गी कीधा कुमत सघलाजे सनमांग वरने मानतारी सदा ॥ जुगप्रधा

गुण श्रेणि आरोहे क्षोभ न मोहेजो, आलं-
वन तजि निज परिणतिमां वसे ॥ वारि० ॥
छंडी० ॥ ५ ॥

अर्थः—दर्शन ज्ञानचारित्र अने वीर्यादि आत्माना अनंत गुणो निर्मल अने थिर करता शिवमार्गमां फोरे के० फेलावे जेथी सकल कर्म प्रकृतिओने छेदता रहे. आत्मबले अने तिक्ष्ण बुद्धिए अनुभव थिर करता वधारता अने ज्ञानानंद रस विस्तारता रहे. गुण श्रेणि आरुढतां मोह परिसहादिके मुंझाय नहीं क्षोभणा पामे नहीं, चलायमान थाय नहीं, देव, मनुष्य, धन, वस्ती आदिनुं आलंबन न चाहातां निजात्म परिणतिमां थिर वास करे ॥ ५ ॥

॥ क्षांत्यादिक सहु मुनि गुणमां न अधू-
राजो, शूरा छे कुवादि मद मर्दवा ॥ जिहां जि-
हां विचरे तिहां तिहां उपद्रव नावेजो, जन्म्य
छे जिन शासन जय राखवा ॥वारि०॥ छंडी०॥६

अर्थः—क्षांत्यादिक सर्व मुनि गुणोमां अधुरा नथी अने कुवादिओना कुमत अभिमान मर्दवा शुरवी-
र छे. आचार्य भगवंत जे जे देशमां विचरे ते ते देशम

मूल छे. जेने देव देवी मनुष्य मनुष्यणी आदिनो संग नथी. विकथा के० अनात्मनी कथनी करता नथी अने जेनुं मन पुद्गल परिणतिमां भींजतुं रीझतुं नथी. भविजीवोने देशना देता शिवसुख खाण छे ॥ ८ ॥

॥ जिन सूरज अस्ते आचारज दीवोजो, भुवन पदारथ प्रगट चंद वलि जेम छे ॥ स्वपर समयना जाण मुनीसर नमिएजो, निजगुण बागे रमवा मुनि मन क्षेम छे ।वारि०।छंमी०।ए

अर्थः—जिनेश्वर रुप सूर्य अस्त के० निर्वाण पाम्या तो आ पंचम काल रुप रातमां त्रिभुवनना पदार्थ प्रगट देखाडवा माटे आचार्य भगवंत दीपक अने चंद्रमा सरखा छे एटले प्रगट करवा प्रवीण छे एहवा स्वपर समयना जाण मुनिछेना ईश्वरने नमीए. आत्म गुण बागमां रमवा मुनिनुं मन थाकतुं नथी पण क्षेम कुशल रहे छे.

समतामयी मुनि तीर्थपती सम दाख्योजो, सुनयने मोक्ष उपमा जिन कही॥ शुद्धात्मयत्री ज्ञानात्म पद ध्यावजो, पूर्णानंद पद पावे

गणने उत्कृष्ट सहाय आपनारा छे. ए के०
जगवंत मोहनी कर्मनी प्रकृतिउ उपशमाववाथ
शुद्धात्म स्वजावमां विशेषे रति उपजी तेथी प्रश
रतिवंत अने डुविधे परम क्षमावंत छे एटले वि
कारणे तो कदापी कोपेज नहीं पण अपराधी उ
पण कदापी कोपे नहीं ॥ १ ॥

॥ मोह कपट मद मान तज्युं जेणे, इं
मन दमीएरे ॥ जविक० ॥ जणे जणावे हि
करि शिष्यने, पुद्गल रस गमीएरे ॥जविक०

अर्थः—जेणे मोह के० पुद्गल परिणतिमां मुं
रहेवुं तथा कपट के० दंज तथा रिद्धि आदि
प्रकारनो गर्व तथा जाति कुल आदि आठ प्रका
तथा कामादि विविध प्रकारना मद मान तज्यां
पंच इंद्रियो तथा मन पोताना वश राख्युं छे.
अध्ययन करे अने शिष्यो उपर पूरण प्रेम राखी
अध्ययन करावे जेने पुद्गलीक जोगमां रस
लागी नथी एटले पुद्गलीक स्वाद गमी
गमाड्यो छे ॥ २ ॥

॥ पंचवीश गुण गुत वाचक कुंजर, वि

धर्मी आत्म अंगे लागेला स्नेह मलने वाली रूप करवावाला छे ॥ ४ ॥

॥ गुत्तिधर दुर्ध्यान निवारी, दुरमति दु गमीएरे ॥ भविक० ॥ स्यादवादमय वाण सुणी तस, आण न अतिक्रमीएरे ॥भविक०

अर्थः—त्रण गुप्तिधारी जे आर्त्त रौद्र अने अशु अध्यवसाय रूप दुर्ध्यान वारवावाला छे. आत द्रव्यादिक शिवाय पुद्गलादि अन्य द्रव्यादिकम अहंपणानी मति आत्म बुद्धि रुप दुर्मति दूर गमावे छे एहवा उपाध्याय भगवंतनी स्याद्वाद वाणी सांभली जाणी तेमनी आज्ञा कदापी पण अति क्रमीए नहीं ॥ ५ ॥

॥ भव भीरु जिन शासन धोरी, अविर चीरमीएरे ॥ भविक० ॥ अप्रमत्त सुत वाच दायक, दोष खमावी खमीएरे ॥ भविक० ॥६

अर्थः—भव भ्रमणथी भय पामेला अने शास भावना धोरी सघला हिंसादि अव्रत तजी स्वभा विक धर्ममां विराम पामेला एटले जेनां मन वच कायां निर्दोष थयां। निवर्त्यां छे राग रहि

ध्यानमा रे लो, निज रिद्धिमां रहे मुदित जो॥ए

अर्थः–पोताना अने अन्य जीवना जवदव दुःख ताप, ज्ञान वीर्ये करी अथवा शुद्धात्म बोध वडे समावे. ज्ञान दर्शन चरणमय सहज आत्म रम्यरूपमां सदा रमे आत्म ध्येय सिद्ध समान जाणी शुद्ध ध्येय धारणा राखी धर्म शुक्ल शुज ध्यानमां वर्त्ते पोतानी ज्ञानादिक लक्ष्मी लक्ष्मां राखी सदा प्रमोदवंत रहे.

वार पडिमा धरे मुनि धर्मनी रे लो,करे क्रिया न वंधन कर्मनी जो॥जीते परिसह फोज वावीशनी रे लो, मति नाठी परमां निज जर्मनी जो ॥ ॥ रंग० ॥ १० ॥

अर्थः–मुनि धर्मनी वार पडिमा आदरे कर्म बंधनी क्रिया करे नहीं एटले कषाय परिणाम सहित क्रिया करे नहि अने संजम अर्थे उचित्त क्रिया आदरे वावीश परिसहनी फोजने जीतें, पर के० पुद्गल डव्यादिकमां अहंपणाना जर्मनी डुर्मति नाठी छे ॥ १० ॥

मूल वंधन छेदे स्नेहनुं रे लो, नवि चाहे आलंबन केहनुं जो ॥ जिन आणा आतम

भाववाथी जीव मोक्ष अभिलाषी थाय ते संवेग गुण (३) देव, मनुष्य, तिर्यंचना विषय भोगोथी चित्त पाछुं हठे ते निर्वेद गुण (४) परमेश्वरना वचन उपर आस्तिकता आवे एटले परमेश्वरे नव तत्वादि जे जे भावो प्ररुप्या ते निशंकपणे साचा छे ते आस्तिक्यता गुण (५) छकायना जीवो उपर द्रव्य भाव दयाना परिणाम थाय ते अनुकंपा गुण. एम समकित साथे प्रथम ए पांच गुण आवे छे. जे जीवने सम्यक्त भावमां रंगनी तरंगो उल्लसे तेने मिथ्यात मोहनी, मिश्र मोहनी अने समकित मोहनी ए त्रणे दर्शनमोहनीनी प्रकृतिओ तथा ते साथे अनंतानुबंधी चार कषायनो उपशम, क्षयउपशम के क्षय थाय एटले उदयमां न होय. समकितवंत सिद्धांतोना सर्वे मर्म जाणे अने निजात्म तत्वमां रीझ पामे. सहु पुद्गलो उपरथी राग छूटतो जाय अने सहेजे शुभध्यान आवे ॥ २ ॥

॥ शुध तत्वना निरधार विण किम, राग परपदनो टळे ॥ शुध तत्वना निरधार करतां, मार्ग मुक्तिनो मळे ॥ शंकादि पंचे दोष टाळे,

ुऋ परिणमेरे, सधे ज्ञान दया शुऋ न्याय ॥ दरशन० ॥ ३ ॥

अर्थः–जीवने अनादि कालथी द्रव्यकर्म अने ावकर्म रूप कुपथ्थ लागेली छे ते सम्यक्‌दर्शन गुणे हेजे विलय जाय अने सहेजे शुऋ ध्यान परिणमे ाया रूडी रीते ज्ञान न्याय अने दया साधि शकाय॥३

अनिहांरे धर्म मंदिरनी दृढ नीमछे रे, शिव हेलनुं पढम सोपान ॥ अनिहांरे शिव तरु स ऋर मूल छे रे, गुण धन्ननुं परम निधान ॥ । दरशन० ॥ ४ ॥

अर्थः–दर्शन गुण धर्म मंदिरनो दृढ पायो छे. र्शन गुण रूप दृढ पीठ विना धर्म मंदिर टके नहि. अने दर्शन ए मोक्ष महेलमां चढवाने प्रथम पगथीउं ‌ एथीज मोक्ष महेल उपर चढाय. मोक्ष फलने ‌प्रापनारूं चारित्र रूप कल्पवृक्षनुं समकीत एज स जयुं मूल छे ते दर्शन के० सम्यक्त् रूप मूल रस ‌हित होय अथवा ना होय तो चारित्र रूप ‌क ते मोक्ष रूप वंछित फल आपे नहि. ज्ञानादि ांत्यादि गुणरत्न रूप धन्न राखवाने सम्यक्तु एज

ठरे ? वली जो आत्मा क्षण भंगुर ठे तो अमुके कर्युं अने अमुके जोगव्युं एवो जाणनार कोण रह्यो ? अने प्रत्यक्षपणे जीव तो पूर्वापर सुख दुःख अनुभववंत देखाय ठे अने जे क्रोध करे तेज प्रत्यक्षपणे क्रोधनी वेदना भोगवे ठे अने जे पोताने नित्य अखंड स्वतंत्र जाणी शांती समाधि आदरे ते समाधि जोगवे ठे. जे झेर खाय ते भेर अने अमृत पीए ते अमृतना स्वाद तथा फलने जोगवे ठे एटले कर्त्ता ज जोक्ता. आत्मा अशुद्धता वशे परजावनो जोक्ता एटले शुजाशुज फलने अज्ञानी अहंपणे जोगवे ठे अने अशुद्धता तजी शुद्धता आदरे त्यारे निश्चय ज्ञान दर्शन चरणादि आनंद जोगी रहे ठे एटले आत्माज जोक्ता ठे एम जाणीए त्यारेज समकित ठरे.

(५) चेतन परमपद--कोई कहे ठे के आत्मा जोक्ता जले होय पण परमनिवृत्ति रूप परमपद (मोक्षपद) सिद्ध थतुं नथी केमके अनादिना रागादि जाय नहीं. तेने कहिए के राग प्रवाह अनादिनो ठे अने उपाधि संबंध ठे समवाय संबंध नथी. ते एक वस्तु उपरथी छूटे अने बीजी वस्तु

ट्टे पण छे. तो शुद्धात्म स्वरूप अणजाणतां असं-
म सेवी जीव, कर्म संबंधे बंधायो छे पण ज्यारे गुरू
उपाए शुद्धात्म स्वरूप जाणे अने संजम सेवे तो
जरूर कर्मबंधथी मुकाय एटले मोक्षनो उपाय
ज्ञान अने संजम छे. आत्म स्वरूप अणजाणते द्रव्य
नाव प्राणनी हाणी रूप असंजम सेवी बंधायो ते
गुरू नये द्रव्य नाव प्राण जाणी संजम सेवीए तो
सकल कर्म रहित थईए. ए मोक्षनो उपाय छे एम
जाणीए त्यारे समकित छेरे.

॥ दोहरा ॥

द्रव्य नाव जीय प्राणने, जेह विराधे अज्ञ ॥
कर्म बंध करी डुःख सहे, तजे विराधन सुज्ञ ॥१॥
द्रव्य नाव जीय प्राणने, जाणी राखे जेह ॥
कर्म रहित थई ते वरे, शिव संपति गुण गेह ॥२॥
समकित ए आत्मार्थी अनेदपणे कल्याणकारी
आत्मानो गुण छे.

अनिहांरे ए विण ज्ञान नचरण छेरे, शून्य
क्रिया कष्ट कलेश ॥ अनिहांरे ए विण सर्वे निज
छंदता रे, पर परिणति चित्त आवेश ॥द०॥७॥

अर्थः—पठी जरू पदार्थनी ईच्छा अने राग घटवा मांडे आखरे पर वस्तुनो राग अने इच्छा रहे नहि अने आत्म गुण अनुजवमां रंग वधतो वधतो रहे वली सम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिक्यता ए पांच गुणो समकित साथे अजंग उल्लास पामे प्रगट थाय. वली समकितना केटलाक जेद आ ढालमां कहेवाया ठे पण बीजा सर्व मली सड-सठ मुख्य असंख्याता जेद पण ठे.

अनिहांरे शिव सत्ता निज साधवा रे, रुचि होय अधिक उमेद ॥ अनिहांरे सवि करणी आत्म प्रशस्तथी रे, साधे शिव मार्ग अखेद॥ ॥ दरशन० ॥ १० ॥

अर्थः—समकित पाम्याथी पोतानी शिव सत्ता साधवा अधिक अधिक रूचि अने उमेद वधे, समकितवंत सर्व करणी शुद्धात्म प्रशस्तपणे आदरे अने आत्म शुद्धताथी अप्रशस्तपणे (प्रतीकुलपणे) जे जे करणी होय ते तजे, मोक्ष मार्ग अखेदपणे साधे.

अनिहांरे शुध्द देव गुरु धर्मने रे, परखे जाणी स्याद्वाद ॥ अनिहांरे निश्चय समकित

॥ अथ श्री सप्तम ज्ञानपद पूजा प्रारंभः ॥

॥ हरिगीत छंद ॥ मात्रा अठावीश ॥

॥ गुण ज्ञान जाण प्रधान गुणमां, लोक अलोक प्रकाशतो ॥ अम कर्मना सवि मर्म छेदे, सूख आपे शाश्वतो ॥ सविकल्पने अविकल्प वस्तु, सकल संशय छेदतो ॥ निज आत्मथी अनात्म परिणति, भिन्न जाणि उछेदतो ॥ १ ॥

अर्थः—आत्माना सर्वे गुणोमां ज्ञान गुण ते प्रधान परम गुण छे. आत्मिक सर्वे गुणो ते ज्ञान अनुजाई-पणेज वर्त्ते. जेम सूर्य रूपी पदार्थने प्रकाशे छे तेम ज्ञान रूप सूर्य लोक अने अलोकना रूपी अने अरूपी. त्रिकालवर्त्तीना अनंत पदार्थो अने तेना अनंता भावोने प्रकाश करवावालो छे. वली आठ कर्मना सर्वे मूल मर्मने छेदी शाश्वतुं सूख आपवा-वालो छे, वस्तुना सविकल्प अने अविकल्प सर्वे संशयने वेदवावालो छे. वली निज आत्माथी अनात्म परिणति भिन्न जाणी जुदी करी उछेदे एटले अ-ज्ञाननी जड उखेडी फेंके ॥ १ ॥

वेत चपल न होवे जाय दूरे प्रमादो । नरजव शुद्ध
ामी वाणिथी मुक्ति साधो ॥ २ ॥ सुमति गुपति
वे खांति मुत्ती दिपावे । रहित चपल योगो थीरता
ारि आवे ॥ नहि पर अवलंबी आपणो आप कामी
हज सगुण जोगे तृप्तिवंता विरामी ॥ ३ ॥ जिन
चन लईने कारकादीक जाणे । सकल दरव सत्ता
क्ति निन्ने पिठाणे ॥ लहि सुनय निखेपा ज्ञान
ज्ञान होवे । लहि अखिल ससत्ता आपमां आप
वे ॥ ४ ॥ लखि पुरण प्रमाणे जर्म जेदी नशावे।
रम मल पखाली निर्मलानंद पावे ॥ उरध तिरजकादी
कि जाणे सुझाने । सकल दरवना जे लक्षणो
तंत्र माने ॥ ५ ॥ विरुध तजि जिवोनुं वाणि राखे
ध्याने । लखि नहि जिनवाणी द्रव्य आदी न
णे॥ न लखि सुजिन वाणी शुरू मार्गे न चाले ।
लट विकट वाटे क्लेशमां आप घाले ॥ ६ ॥ विरुध
रि जिवोनुं क्लेश तापे तपे ते । त्रिजुवन वन दाहे
ाम कष्टो सहे ते ॥ तन वचन मने जे आण जाणी
सेवे । विमल सकल लीला जोगनो लाज लेवे
७॥ जवजल अति ऊंडो वाणि माताजि तारे । दृढ
ापल जहाजे बेसिं आवे किनारे ॥ सदगुरु सम:

गुण निर्मल दृढ प्रगट थाय छे. वचनगुप्ति वडे अक्षय दर्शन गुण निर्मल दृढ प्रगट थाय छे. अने कायगुप्ति वडे अक्षय क्षायकचारित्र गुण निर्मल दृढ प्रगट थाय छे ॥ ८ ॥ इति त्रीजी कायगुप्ति ॥

ढाल नवमी ॥ रसीयानी देशी ॥

धर्म धुरंधर मुनिवर सद्दहो, नाण चरण संपन्न, सुगुण नर ॥ ईंदि भोग तजी निज सुख भजी, भवचारक ऊद्विन्न सुगुणनर ॥ धर्म० ॥ १ ॥

अर्थः—हे गुणवंत प्राणी ! धर्मना धोरी मुनीने जाणी सद्दही सद्दही सेवीए. के जेने ज्ञान दर्शन चरण आदि उत्तम गुणो संप्राप्त थया छे वळी इंद्रिय भोगनां उपचरित विषय सुख विषवत् जाणी तजी ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य अव्याबाधादि निज स्वतंत्र अपराश्रित सुख जाणी आदरी भवचारक पणाथी भीरु उद्विन्न थएला छे ॥ १ ॥

द्रव्य भाव साची सरधा धरी, परिहरि शंकादि दोष ॥ सुगुणनर ॥ कारण कारज साधन आदरी, धरि सुध्यान संतोष ॥ सुगु०॥

लोकसन्न वीतिगिछा वारता, करता सं-
यम वृध्दि ॥ सुगु० ॥ मुल उत्तर गूण सर्व
संजारता, धरता आतम शुध्दि ॥ सुगु० ॥ ४ ॥

अर्थः—लोक संज्ञानी दुगंछा अणकरता हमेशां सत्तर प्रकारे संयम जाव वृद्धि करता अने सत्तर प्रकारे असंयमरुप दोष टाली पंच महाव्रतरुप मूल गुण अने आठ प्रवचन माता आदि अनेक उत्तर गुण संजाली आत्म शुद्धना धारण करता विचरे छे ॥ ४ ॥

श्रुतधारी श्रुतधर निश्रारसी, वसि कर्या
त्रीक जोग ॥ सुगु० ॥ अन्यासी अजिनव
श्रुतसारना, अविनाशी ऊपयोग ॥ सुगु० ॥५॥

अर्थः—पोते श्रुतधारी अने उत्कृष्ट श्रुतधरनी निश्राए चालवाना रसिया वली जेणे मन वचन काया त्रण योग वश कर्या छे वली जे नवा नवा सार सिद्धांतना अन्यासी जेनो अविनाशी उपयोग शुद्ध थिर थयो छे एटले क्रोध, मान, माया, लोज, हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंछा, पुद्गल

यश लाजे निज सम्मत थापवा, पर जन रंजन काज॥सु०॥ज्ञान क्रिया द्रव्यत विधि साचवे, तेह नहि मूनिराज ॥ सुगु० ॥ १४ ॥

अर्थः—जश लाजना अर्थी पोताना सम्मतमां लाववाने (पोताना अभिप्राय साथे घणाने मेलववाने) जन मन रींझे एवी देशना दई द्रव्यथी ज्ञान क्रिया विधि साचवे तेमांहे मुनीपणु नथी. लोको अनादिथी भावधर्मना अजाण छे तेने भावधर्मनो अजाण बाह्य व्यवहार क्रिया ज्ञान ध्यानादि आडंबर बतावी पोतानुं महत्पणु देखाडी लोकोने पोताना अभिप्रायमां मेलवी पोताना अभिप्राये चलावे तो लोको भावधर्मना अजाण एकांते क्रिया करी पोताने धर्मी मानी हमे मोक्षमार्गना अधिकारी थीए एम मानी संतोष करे एटले पछवाडे भावधर्म पामवानो अवसर आववो तो वेगलोज पण भावधर्म वर्तावतानो उपघात अविनय आशातना करता फरे. माटे भावधर्म पामेला मुनीने परखी तेमनी निश्राए वर्त्तवुं ॥ १४ ॥

बाह्य दया एकांते उपदिशे, श्रुत आम्नाय विहीण॥सु०॥ठग पेरे ठगता मूरख लोकने, बहु

भव नय नथी ॥ इम जाणी निज शक्ति, सधर्म धरा धरो । मनसुख लहि जिन वाणि, स शिव कमला वरो ॥ १३ ॥

॥ पद्धरी छंद ॥

जय जिनवाणी आनंद कंद, हरती दुख दोहग कर्म फंद। ए विण जग करणी अंध धंध, सुख सहज लहो एथी अमंद ॥१॥ ए विण बहु खेद ने अन्य आश, सहे मूढ त्रास थइ जगत दास। जिन वचने आनंदपुर निवास, विण खेदे प्रगटे सुख विलास ॥२॥ विण वाणि लखे भवभ्रमण होय, अरु कर्म बंध करे मूर्ख सोय। नरकादिक पडि परतंत्र होय, सहजिक निज संपति मूर्ख खोय ॥ ३ ॥ जिनवाणि लखे भ्रम तम विलाय, निज सहजिक संपति शुद्ध पाय। लखे देव धर्म गुरु शुद्ध बुद्ध, निज परथिं रहे अविरुद्ध शुद्ध ॥ ४ ॥ लखि दर्वित भावित जीव प्राण, जग जंतु सुखनि नां करत हाण । तजि आश्रव मूदे दुःख कूप, धरि संवर पामे शुद्ध रूप ॥५॥ पूरव बंध निर्झर करत संत, लहे मुक्ती भवजल होय अंत। शुध तत्त्व न पामे नय अजाण, करे आरत

॥ ललित छंद ॥

आसना चित्तमां धरो, अचल आत्मनी संपदा वरो । कुनय त्यागतां जाय आपदा, सुनय सेवतां सिद्धि संपदा ॥ १ ॥ सुगुरु ना लह्यो ना सुदेवने, ममत आदरी खोटि टेवने । करम बांधियां स्नेह राखिने, अधिक कामना जोग चाखिने ॥ २ ॥ तिरय थापिने तारता तर्या, वचन तेहना चित्तमां ठर्या ॥ अखिल शुद्धता वाणियी लहो, परम आत्ममां थीरता लहो ॥ ३ ॥ धरम धारतां मूढता टलें, विमल संजमे शांतिमां जले ॥ अखिल जंतुनी पे विधे दया, सरव कालमां राखिए मया ॥ ४ ॥ करम बंधना कारणो यथा, वच अजाण ते ना लहे तथा ॥ वच अजाण ते संवरे नाहिं, सकल कालमां बंधशे सही ॥ ५॥ वच सुजाण ते बंध तोडशे, पुरण आक्रमे मोह मोडशे ॥ सुमग आदरे वाणि जाण जे, भव घने फरे वाणि मूढ ते ॥ ६ ॥ वचन देवनां पुण्यथी भरे, वचन वीरनां पाप क्षय करे ॥ वचन ज्ञानिनां कल्पना हरे, वचन ज्ञानिनां शुद्धता करे ॥ ७ ॥ वचन देविए जंतु तारिया, उमग चा-

चित चपल न होवे जाय दूरे प्रमादो । नरजव शुज पामी वाणियी मुक्ति साधो ॥ २ ॥ सुमति गुपति होवे खांति मुत्ती दिपावे । रहित चपल योगो थीरता प्यारि आवे ॥ नहि पर अवलंबी आपणो आप कामी सहज सगुण जोगे तृप्तिवंतो विरामी ॥ ३ ॥ जिन वचन लहीने कारकादीक जाणे । सकल दरव सत्ता व्यक्ति जिन्ने पिछाणे ॥ लहि सुनय निखेपा ज्ञान विज्ञान होवे । लहि अखिल ससत्ता आपमां आप जोवे ॥ ४ ॥ लखि पुरण प्रमाणो जर्म जेदी नशावे। करम मल पखाली निर्मलानंद पावे ॥ उरध तिरजकादी शक्ति जाणे सुज्ञाने । सकल दरवना जे लक्षणो जिन्न माने ॥ ५ ॥ विरुध तजि जिवोनुं वाणि राखे सुध्याने । लखि नहि जिनवाणी द्रव्य आदी न जाणे॥ न लखि सुजिन वाणी शुद्ध मार्गे न चाले । उलट विकट वाटे क्लेशमां आप घाले ॥ ६ ॥ विरुध करि जिवोनुं क्लेश तापे तपे ते । त्रिजुवन वन दाहे जीम कष्टो सहे ते ॥ तन वचन मने जे आण जाणो सु सेवे । विमल सकल लीला जोगनो खाच सेवे ॥७॥ जवजल अति उंडो वाणि माताजि तारे । द्रढ शियल जहाजे वेसि आवे किनारे ॥ सदगुरु सम-

शत्रु कोण मित्र ॥ मित्त हणी अरि पोपता रे, ते लहे दुःख विचित्त रे ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ शत्रु मित्र ज्ञाने लखे रे, पोपे विवेकादि मित्त ॥ रागादिक शत्रु लूणे रे, साचो तेह विनित रे ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ ज्ञायक रूप हुं एक छुं रे, तेहथी विलक्षण अन्य ॥ सहज शाश्वत धनवंत छुं रे, निर्मल नित्य प्रसन्न रे ॥ चेतन० ॥ ५ ॥ पुरण जेद विज्ञानथी रे, ममता नाशे दूर ॥ मनसुख शिव संपति लहेरे, चिदानंद जरपूर रे ॥ चेतन० ॥ ६ ॥

॥ श्री शांतिजिन स्तवन ॥ वसंत तिलका छंद ॥

हुं ज्ञानवंत अमलान शुधात्म जोगी ॥ ज्ञाता सदा अचल एक प्रमोद योगी ॥ राखी सत्नाव पर-जावधि निःप्रयोगी ॥ ना काम छे पर पदे नहि अन्य योगी ॥ १ ॥ ना राग रोप न न मान करे कदापी ॥ ना संग रंग न न पुद्गल बुद्धि थापी ॥ शांती जिनेश परमात्म सत्नाव लीना ॥ शांती दिये जविकने शिव रंग जीना ॥ २ ॥ दीनो सुबोध सवि मोह विकार नाशे ॥ आत्मा वरे विमल ज्योति सदा प्रकाशे ॥ तेणे नमो परम हेतु लखी जिणंदा ॥ देवाधिदेव प्रजु सेवित इंद्र चंदा ॥ ३ ॥ सेवुं सदा

थवा नहि स्हेजे, नहि कोइ केहने सारे हो ॥ ६ ॥ किण किण तुजने कोण चेतावे, दुर्लभ सदगुरु जोगो हो ॥ आपोह आप चेतावी मनसुख, लहो शिव सुंदार जोगो हो ॥ ७ ॥

॥ राग कनको ॥

चेतन एकही तुं निज रिंझे, और रिंझ कनु काम न आवत कोटी जतन जोरे कीजे ॥ सचल समल परद्रव्य क्षेत्र पर काल भाव तजी दीजे ॥ चे० ॥१॥ नरनारी अरु राज अश्व गज, देवादिक रिंझवीजे ॥ सासय संग रहे नहि तेहु, निर्थक कष्ट तजीजे ॥चे० ॥२॥ कोटि दाम अरु काम आराम दे, जो जनको वश कीजे ॥ खीण खीणमें वे उलट पुलट कर, घेर घेर अति खीजे ॥चे०॥३॥ औरकी रिंझ चहे जन मूढा, रिंझ शुधातम लीजे ॥ समकाले निजपर केम रिंझे, न्याय सुधारस पीजे ॥चे०॥४॥ ज्ञानादिक निज शक्ति अनंती, सहजातम फोरिजे ॥ मनसुख परम विरज थीर थावे, तो शिव सुंदरि रींझे ॥ चे० ॥ ५ ॥

॥ गीत ॥ पहेला रुपभदेव वंदिए साहेली रे ॥एराह॥

श्री वागेश्वरी वीनवुं साहेली रे, गणधर लागुं हुं पाय विमल चित्त चोकमां साहेली रे ॥ अमृत

॥७॥ जीरे परम आदर सनमान रे शासन० ॥ जीरे मन उल्लसे तन वीकसे, जीरे देखत गुरु मुख चंद रे ॥शा० ॥८॥ जीरे संवर शांति वरसावता, जीरे वचनामृत जलधार रे शासन० ॥ जीरे निरमल चित्त वाजठ ठवी, जीरे समकीत स्वस्तिक सार रे ॥ शासन० ॥ ए ॥ जीरे गुण गण मोतीके वधावीए, जीरे लुंछणां करीए रसाल रे शासन० ॥ जीरे त्रिविध जक्तिए वंदण करो, जीरे हृदय प्रेम विशाल रे ॥ शासन० ॥ १० ॥ जीरे जीव दया तोरण बांधीए, जीरे गावो गुरु गुण माल रे ॥ ॥ शासन० ॥ जीरे सहज संतोष सूख पामीए, जीरे निज नीधि अखय अपार रे ॥ शासन० ॥ ११ ॥

॥ पद ॥ (१६)

सृष्टीमां अमृत वृष्टी आज तो वरसी रही ॥ए राह॥

ज्ञान सिंधू जिन वदनथी, वचामृत वृष्टी थई ॥ शांति शांती पर्म शांती, सर्वदा फेली रही ॥ विगत दोष सुगुण कोष, ते शिवंकर ते सही । दुष्ट थोक कर्म रोग, पीडा सो दूरे गई॥ ज्ञा० ॥१॥ जव्य जीवो हरे पान चित्तमां मूदित थई ॥कषायोनी दुष्ट आग स्पर्शतां बूझी गई ॥ विषयोनी जे पिपासा,

परसी रही ॥ चिरकाल प्रबल कषायनी अमी सकल बूझी गई ॥ शुध० ॥ १ ॥ जिन वचन अमृत पानमां भवि मग्न थई तृप्ति लही ॥ पर आस दासपणा तणी सवि दीनता दूरे वही ॥ शुध० ॥ २ ॥ निज ज्ञान दृग सुख वीरज सासत, शक्ति व्यक्तिपणे करी । जग पंक जडचल जंतुनी सवि कामना दूरे हरी ॥ शुध० ॥ ३ ॥ भव उदधि तारण सेतु गुरुसम, अवर जग हेतू नहीं ॥ प्रभु चरण कमल सुवास मृगमद, आत्म परिमलता लही ॥ शुध० ॥ ४ ॥

सवैया तेवीसा—मोह महा मद वाय रह्यो निज रिद्धि विसार स औरकुं ध्यायो ॥ ता महि स्वाद लह्यो नहि चेतन आप लही अपने घर आयो ॥ वार अनेक पचारि कहुं निज ज्ञान विना सम सूख न पायो ॥ ता तें कह्यो अब मान चिदानंद धार तुं सद्गुरु आण सदायो ॥ १ ॥

सवैया तेवीसा—आप विसारके जो दुःख पावत, सो दुःख जात न मूख उचारी ॥ ता तें सुज्ञान धरो अपने चित्त ज्ञान असी ग्रहि मोह विदारी ॥ ध्यान धरो नित शुद्ध सरूपको, जाय मिटी भव वास व-

पा तें सुसम्यकप्राकम फोरत, मृगमद तोरत सर्व विपत्ती ॥ ५ ॥

॥ शीखरणी छंद ॥ (१ ए) मल्लीनाथ जिन स्तवन ॥

नमो मल्लीनाथं, करम मज व्याधी छुर करो ॥
अनंता ज्ञाने तो, पुरण मुज आत्मा सुख नरो ॥
अनंतानंदी तुं, सकल नवि तारू नयहरू ॥
तमारी आणामां, मन वचन काया थिर करूं ॥ १ ॥
अनंता जीवो सो, सगुण निधि नूली नव नमे ॥
अचीरे उफारो, प्रजुजि विण बीजो नवि गमे ॥
तस्या तारो तारो, सकल मुज व्यक्ति शिव करो ॥
पुज्या देवो वृंदे, अचल तुज ध्याने थिर धरू ॥ २ ॥
घहूने तास्या तें, मुज गरिब जाणी छुःख हरो ॥
सदा शर्णे राखो, सहुने समनावे सुखि करो ॥ लह्यो आशो मोटो, सकल नय नाग्यो दरश तें ॥ नवाब्धी जीसेथी; तुम सम न तारू अवर छे ॥ ३ ॥ लुंटेरा मीथ्याती, कुगुरु मलधारी लुंटत हे ॥ नसी आव्यो आथे, तुजथि करपी ते छुर रहे ॥ लह्यो में स्याद्वादं, कुमत तुज तापो नवि सहे ॥ पुजुं हुं आणंदे, मृगमद सुवासे महमहे ॥ ४ ॥

विना पण श्रुत एज मोक्षनुं घर छे ॥ ११ ॥

पंचम काले श्रुत बल पण घट्योरे, तो पण ए आधार ॥ देवचंद्र जिन मतनो तत्त्व ए रे, श्रुतश्युं धरज्यो प्यार ॥ श्रु० ॥ १२ ॥

अर्थः—आ पांचमा दुषमकालमां श्रुतबल घटयुं छे तो पण श्रुतनोज आधार छे. देवचंद्र मुनी कहे छे के जिन मतनो सार ते श्रुतज्ञानज छे ए माटे श्रुत अभ्यासमां पूर्ण प्रीती राखजो ॥ १२ ॥

॥ ढाल २ जी ॥

॥ अनुमती दीधी माए रोवती ॥ ए देशी ॥

रयणावली कनकावली, मुत्तावली गुण रयण ॥ वज्रमध्यने जवमध्य ए, तप करीने हो जीपो रिपु मयण ॥ १ ॥ भवियण तप गुण आदरो, तप तजेरे छीजे सहु कर्म ॥ विषय विकार सहू टले, मन गंजे रे भंजे भव भर्म ॥ भवि० ॥ २ ॥

अर्थः—रत्नावली, कनकावली, मुक्तावली, गुणः रत्न, वज्रमध्य अने जवमध्य ए आदि तप करी

जिम जिम प्रतिज्ञा दृढ थकी, वैरागीओ तपसी मुनिराय । तिम तिम अशुज दल ठी-जवे, रवि तेजेरे जेम शीत विलाय ॥ज०॥४॥

अर्थ–वैरागी तपस्वी मुनिराज जेम जेम पोतानी प्रतिज्ञा दृढ करे तेम तेम अशुजकर्मदल ठीजवे जेम सूर्यना तेजथी शीत नाश पामे तेम अशुजकर्म-दल नाश पामे ॥ ४ ॥

जे जिक्षु पमिमा आदरे, आसन अकंप सुधीर । अति लीन समता जावमां, तृण पेरे हो जाणंत शरीर ॥ ज० ॥ ५ ॥

अर्थः–जे मुनि साधुनी बार प्रतिमामांहेथी कोई पण प्रतिमा आदरे अने धैर्यपणे अडोल अकंप आसने रहे समताजावमां अतिशय लीन थई उप-योगनी थीरता वधारे अने शरीरने तृण पेरे जाणे ते मुनि सहज शिव संपदा वरे ॥ ५ ॥

जिण साधु तप तलवारथी, मूंड्यो हे दो अरि मोह गयंद । तिण साधुनो हुं दास हुं, नित्य वंदूरे तस पय अरविंद ॥ ज० ॥ ६ ॥

अर्थः–जे साधुए तपरुपी तलवार वडे मोह शत्रु

हो ते सहंत महंत ॥ ज० ॥ ए ॥

अर्थः—निज आत्म कंचन करवा एटले रागद्वेषादि मलीनता टाली शुद्ध सिद्ध रुप करवा तपरुप अग्नि एकरी कर्म मेल प्रजाली आत्मअंग शुद्ध कंचन करे. नव नवि लब्धिना बल छते पण सनतकुमार चक्री पेठे महंत पुरुषो निराकुलपणे उपसर्ग परिसह सहे ॥ ए ॥

धन्य ! तेह जे धन गृह तजी, तन स्नेहनो करी छेह । निसंग वनवासे वसे, तपधारी हो ते अभिग्रह गेह ॥ ज० ॥ १० ॥

अर्थः—धन्य ! तेने के जे धन अने घर तजी तन स्नेहनो छेह करी निसंग निर्जयपणे परसंग तजी वनवासे रहे. तपधारी मुनि ते अभिग्रहना घर छे. जगतवासी जीव स्नेहपासे बंधायेला छे. स्नेह समान अन्य पासज नथी तेमां मुख्य स्नेह देहनो छे. देह स्नेहवडेज घर धन स्त्री मित्र कुटुंबादिनो स्नेह थाय छे. जेणे देहथी भिन्न शुद्ध निजात्म स्वरुप जाण्युं तेने देहनो स्नेह पण रहेतो नथी तो अन्य वस्तुनो स्नेह क्यांनो रहे ? माटे देह स्नेह छोडे तेज तपस्या आदरे१०

क्रोधादिक वशे रण समे, सह्यां दुःख अनेक ॥ ते जो समतामां सहे, तो खरो विवेक ॥ रे जीव० ॥ ७ ॥

अर्थः—क्रोधादिक वशे रणसंग्राममां मनुष्यो अनेक दुःख सहे छे अने विषय वशे पण अनेक दुःखो सहे छे. तेमज जीवो मान अने लोभ वशे जाणी बूझीने अनेक दुःखो सहे छे पण जो समता वशे दुःखो सहे तोज साचो विवेक छे ॥ ७ ॥

सर्व अनित्य अशाश्वतो, जे दीसे एह ॥ धन तन सयण सगां सहु, तिणस्युं श्यो नेह ॥ ॥ रे जीव० ॥ ३ ॥

अर्थः—जे जे नजरे देखीए छीए, नाकवडे सुंघवामां आवे छे, जिव्हा वती चाखवामां आवे छे, त्वचावडे स्पर्शाय छे ते ते धन तन सज्जन सगां संबंधी लोही हाड मांस वीर्य रत्न मणि माणेक सुवर्ण औदारिकशक्ति, वैक्रियशक्ति, मनबल वचनबल ए आदि सर्वे पुद्गल पर्यायो अनित्य अशाश्वता परतंत्र चल मल जड छे तेथी शुं स्नेह करवो ? के जेना वडे शुद्ध आत्मीक स्वतंत्र आनंदनी हाणी

कारमो परिवार मल्यो छे तेथी प्रीति करी आत्म
शुद्धताने चूकवुं ए शुं हितकारी छे ? ना एतो
हितकारी नथी पण अहितकारी छे ॥ ५ ॥

ज्यां स्वारथ त्यां ए सहु सगां, विण स्वा-
रथ दूर ॥ पर काजे पापे नखे, तुं किम होयें
सूर ॥ रे जीव० ॥ ६ ॥

अर्थः—ज्यांसुधी जेने स्वारथ छे त्यांसुधी ते सर्वे सगपण राखे छे पण स्वारथ थया पछी वेगला रहे छे तो ताहरे पोताना आत्म गुण शिवाय अन्य परिजनथी कांई स्वारथ नथी तो पर काजे तुं शा वास्ते पापमां नखुं छुं अने पाप कार्यमां केम शूरो थाय छे तुं ? ताहरूं शूरपणुं ताहरा रागादि शत्रुओने विदारवामां जो वापरूं तोज ताहरूं पुरूषपणानुं सानुं पराक्रम कहेवाय पण कर्म शत्रुओने पोषवामां अने आत्म गुणोनी हाणी करवामां शूरपणुं करे तेना जेवो मूर्ख कोण ? ॥ ६ ॥

तजि वाहिर मेलावमो, मिलियो वहु वार॥
जे पुरव मिलियो नहीं, तिणस्युं धर प्यार ॥
॥ रे जीव० ॥ ७ ॥

अमुक सगुं मांदुं थयुं मरण पाम्युं अथवा तो आ स्रीने आ दरद छे अमुक रीसायुं एम परिवारनी चिंतामां हां हां करतो फरूं तुं पण तुं जे कर्म बांधुं छुं तेनी चिंता करतो नथी तो नरक पड्यां तने कोण निचिंत राखशे ? माटे लांबी नजरे विचार कर के जे शुद्धात्म तत्त्व चूकी प्रमाद आदरे छे तेनुं फल - तेज भोगवे पण बीजो कोई भोगववा लागे तेम नथी. कोई पुरूप हाथ आवेलो चोर छोडी दे अने विचारे के क्यां जवानो छे ? पण ते चोर पाछो हाथ आवे नहीं तेम धर्म साधवा रूप उत्तम नरभव हाथ आव्यो छे अने तुं गफलत राखुं के शी फीकर छे तो नरभवादि सर्वे धर्म सामग्रीनो जोग मलवो दुर्लभ छे एम जाणवुं ॥ ए ॥

रोगादिक दुःख ऊपने, मन अरति मधेव॥
पूरव निज कृत कर्मनो, ए अनुभव देव ॥
॥ रे जीव० ॥ १० ॥

अर्थः—रोगादिक दुःख ऊपने तुं मनमां अरति न मदीश केमके पूर्व निज कृत कर्मनो एहवो अनुभव छे. वली तुं निज रूपे आरोग्य ज्ञापक

संग छे त्यांसुधी क्रोमो उपायथी पण ए देहनो संग थवानो नथी अने तुं तो ज्ञायक असंग अंग वाळो छुं ॥ १२ ॥

आगळ पाछळ चिहुं दिने, जे विणसी जाय ॥ रोगादिकथी नवि रहे, कीध कोटी उपाय ॥ रे जीव० ॥ १३ ॥

अर्थः–देह तो आगळ पाछळ चार दिने निश्चय विनाश पामवावाळी छे अने रोगादि टाळवा क्रोमो उपाय करवाथी पण रहे एवी नथी ॥ १३ ॥

अंते पण एने तज्यां, थाये शिव सूख ॥ ते जो छूटे आपथी, तो तुज श्यो दूःख ॥ ॥ रे जीव० ॥ १४॥

अर्थः–आखर पण देहनुं ममत्व अने देहने छोडवाथीज नियमा शिवसुख थाय छे. तो ते देह आपथी छूटे तेमां तुजने शुं दुःख छे ? देहना ममत्व वडेज अनेक जातना कर्म रोग अने दुःख खडां थयां छे तो ते ममत्व तजवाथीज सुख थाय एमां शुं शंका छे ? ॥ १४ ॥

ए तन विणसे तादरे, नवि कोई त्राण ॥

दुगलने पुद्गल करे, तुं अमर अगाद ॥
रे जीव० ॥ १७ ॥

अर्थः–देह उपर छेदन भेदन ताकन तर्जन वध
धन दाह आदि जे जे वेदना थाय छे ते पुद्गलने
पुद्गल करे पण तुं तो अमर अने कोईने ग्रहवा
रकरूवामां न आवुं एहवो हुं तो पर पुद्गल अथिर
वस्तुनो ममत्व शा वास्ते करूं हुं ? ॥ १७ ॥

पूर्व कर्म उदये सही, जे वेदना थाय ॥
ध्यावे आतम तिण समे, ते ध्यानी राय ॥
॥ रे जीव० ॥ १८ ॥

अर्थः–पूर्व कर्म उदय वशे शरीर उपर जे जे
वेदना थाय ते समय जे जीव आत्मानो अक्षय
अवेदक गुण ध्याय तेज ध्यानी राजा समजवो॥१८॥

ज्ञान ध्याननी वातमी, करणी आसान ॥
अंत समे आपद पड्यां, विरला करे ध्यान
॥ रेजीव० ॥ १९ ॥

अर्थः–ज्ञान ध्याननी वात करवी सुगम छे पण
कोई शुजाशुज उदय आव्ये, अंत समय

स्थानने अनुमूख सहित पहेलेथी उखेमी फेंक एटले ते परिसहो आववाना नथी. पण पर द्रव्यमां अहं-पणानो भर्म भेदज्ञाननी शक्ति वडे प्रथमथीज दूर करवो ए परमोत्तम ईलाज छे ॥ २१ ॥

देह गेह भाडा तणो, ए आपणो नाहि ॥
तुज गृह आतम ज्ञान ए, तिण मांहे समाहि
॥ रे जीव० ॥ २२ ॥

अर्थः—देह ए भाडानुं घर छे पण आपणुं नथी. ताहरूं घर तो आत्म ज्ञान सहित स्वप्रदेश रूप सत्ता-भूमि छे. तेमांहे तुं समाईश पण पुद्गल पर्याय रूप परघरमां ताहरो समावेश नथी ॥ २२ ॥

मेतारज सूकोसलो, वली गजसुकुमाल ॥
सनतकुमार चक्री परे, तन ममता टाल ॥
॥ रे जीव० ॥ २३ ॥

अर्थः—मेतारज मुनि, सुकोसल मुनि, गजसुकुमाल मुनि वली सनतकुमार चक्री के जेणे प्रथम-थीज देहनी ममता त्यागो हती तो उपसर्ग पण रूमी रीते अचल अडोल आत्म मगनपणे रह्या, तेम तुं पण आत्म शुद्धतामां

नरजव श्रावक कुल लह्यो ॥ तु० ॥ साधो समकित सार ॥ जविक० ॥ जिन आगम रुचिशुं सुणो ॥ तु० ॥ आलस निंद निवार ॥ जवि०॥ २

अर्थः—उत्तम आर्य क्षेत्रमां नरजव श्रावककुल सद्गुरू अने सत्शास्त्र योग पाम्या के जे दृष्टांते पामवो दुर्लज्ञ छे. एवी सामग्री पामी विषय प्रमाद वशे फोगट न गमावो अने सार समकित गुण पाम्या छो माटे आलस अने निद्रा छोडी जिनेश्वरे प्ररूपेलुं आगम के जेमां सम्यक्पराक्रम फोरी सकल कर्मोनो नाश करी परमनिवृत्ति रूप मोक्षपदनी प्राप्ति थाय ए आदि जाव थताव्या छे ते आगम परम प्रेम रूचि आदर सहित सांजलो. वली आगममां पंचास्तिकायना अने नवे तत्त्वना जाव सत्यरूपपणे सिद्ध करी देखाड्या छे ते सांजली शंकादि दोष टाली निःशंक निर्जयपणे मोक्ष मार्ग साधो ॥ २ ॥

समयांतर सहजावनो ॥ तु० ॥ दर्शन ज्ञान अनंत ॥ ज० ॥ आतम जावे थिर सदा ॥ तु० ॥ अक्षय चरण महंत ॥ ज० ॥ ३ ॥

छे वली परम अचल अनंत वीर्यवंत अने ममत्व तज्येथी दीनता रहित छे. कार्मण आदि सूक्ष्म तनु बंधन विना जेनी अवगाहना अटलपणे पोताने स्वाधीन छे ॥ ५ ॥

पुद्गल सकल विवेकथी ॥ तु० ॥ शुद्ध अमूर्त्ति रूप ॥ ज० ॥ इंद्रिय सुख निस्पृह थई ॥ तु० ॥ अकषाय अबाह स्वरूप ॥ ज० ॥६॥

अर्थः—पुद्गल ते पोताना वर्ण गंध रस स्पर्श सडण पडण विध्वंसन ग्रहण त्याग ए आदि अनेक रूपी लक्षण सहित छे. एथी भिन्न आत्मा ज्ञान दर्शन रमण सुख वीर्य दान लाभ भोग उपभोग उपयोगादि अनेक अरूपी अमूर्त्ति लक्षण युक्त सदा छे. कोई काले पण ते पुद्गलादि अन्य द्रव्यना विशेष लक्षणवालो हतो नहीं, छे नहीं, थशे नहीं, माटे पर लक्षणे पोताने न जूओ. आत्मा स्वलक्षणे अस्ति परलक्षणे नास्ति रूप छे. एम परम विवेके स्वपर भिन्नता जाणी पर ममता आदि त्यागी आपणा द्रव्य क्षेत्र काल भावमां आपापणानी रूची मति करी थिर उपयोगे अखंड समय

अर्थः—आत्म शुद्धतानो अनुभव करतां परम प्रमोद उपजे अने पुद्गल विषय अनुभव रूप अशुद्धता टले. जे मुनि अनंत लक्षणमयी पोताना ज्ञायक एक रूपनो अभ्यास करे—ध्याय तेने मोक्ष सुख पोतानी गोदमां एटले पोताना खोलामांज छे ॥१०॥

वंध अवंध ए आतमा ॥ तु० ॥ करता अकरता एह ॥ भ० ॥ एह भोगता अभोगता ॥ तु० ॥ स्यादवाद गुण गेह ॥भ०॥११

अर्थः—परद्रव्यना ममत्वथी बंधायलो आत्मा द्रव्यकर्म तथा भावकर्म बांधे छे पण शुद्ध आत्म स्वरूप जाणी पर परिणामीकता त्याग्या पछी स्वस्वरूपमां रमे त्यारथी ते अबंध छे. वली व्यवहार नयथी द्रव्यकर्म अगर पुद्गल वर्गणा जीव बांधे छे अने निश्चय नयथी पोताना स्निग्ध रूक्ष गुणे करी पुद्गल परमाणुआ अगर पुद्गल वर्गणा आपसमां पुद्गलो साथे बंधाय छे पण जीव, पुद्गलो साथे बंधातो नथी. व्यवहार नयथी जीव द्रव्य कर्मनो अने गाम नगर घट पटादिनो कर्त्ता कहेवाय पण निश्चय नयथी गाम नगर के घट पट तथा द्रव्य — — वर्गणा आदिनो — जीव

अर्थः—ए पंच भावना मुक्तिनी निशानी अर्थात निसरणी छे. एम जाणी ए भावनाउमां विशेष रक्त थई तन्मयताए भावो. तेथी अप्रशस्त योग कषायो अने कपट आदि दुर्गुणोनी हाणी थाय. अने ए भावना निर्मल जाणी जे सेवे ते उतावलो आत्म शुद्धता पामे ॥ १ ॥

पंच भावना ए मुनि मनने, संवर खाणी वखाणीजी ॥ वृद्दत्कल्प सूत्रनी वाणी, दीठी तेम कहाणीजी ॥ भा० ॥ २ ॥

अर्थः—ए पंच भावना मुनिउना मनने संवर निपजावनारी संवर भावनी खाण वखाणी छे अने एवुं वखाण वृहत्कल्प भाष्यमां जेम देख्युं तेम अहियां कह्युं छे ॥ २ ॥

कर्म कतरणी शीव निसरणी, झाण ठाण अनुसरणीजी ॥ चेतन राम तणी ए घरणी, भव समुद्र दुःख हरणीजी ॥ भा० ॥ ३ ॥

अर्थः—ए भावनाउ दुष्ट कर्मने कापवाने कतरणी समान, शिव महेलमां चढवाने निसरणी समान,

मुनि गुण गाया. जे भवि ए शुद्ध भावना भावशे ते अयाह् अमाप सहजात्मीक अत्यंतिक सुख पामशे ५

जेसलमेरी शाह सुत्यागी, वर्द्धमान वड भागीजी ॥ पुत्र कलत्र सकल सोभागी, साधु गुणना रागीजी ॥ भ० ॥ ६ ॥

अर्थः–जेसलमेर नगर निवासी सुत्यागी देश विरति मोहोटा भाग्यशाली वर्द्धमान नामे शेठ जेना पुत्र स्त्री आदि सर्वे सौभाग्यवंत अने मुनि गुणना रागी छे ॥ ६ ॥

. तस आग्रहथी भावना भाई, ढालबंधमां गाईजी ॥ भणशे गुणशे जे ए ज्ञाता, लहेशे ते सुख शाताजी ॥ भा० ॥ ७ ॥

अर्थः–तेमना आग्रहथी ए भावनाउंनी में ढाल बंधमां रचना करी–गाई. ए भावनाउं जे ज्ञाता भणशे गुणशे अने भावशे ते परम सुख शाता पामशे ॥ ७ ॥

मन शुद्ध पंचे भावना भावो, पावन जिन

एकत्वपणे करी सांजलो के जेम तमारा देहरुप घरमां तेवा गुण समूह आवी–रही तमोने आनंद प्रमोद उपजावता रहे ॥ १ ॥

जंबुदीव सिरि जरहखित्त, खोणीतल मंझण ॥ मगध देश सेणिय नरीसर रिउ दल बल खंडण ॥ धणवर गुब्बर गाम नाम, जिहां जण गुण सजा ॥ विप्प वसे वसुजूई तड, जसु पुहवी जजा ॥ २ ॥

अर्थः–आ जंबुद्विपमां श्री दक्षिण जरतक्षेत्रना पृथ्वी तल मंझणे मगध देशमां श्रेणिक नामे राजा राज्य करे छे. ते रिपुदल अने रिपु बलनो खंडण करवावालो छे. तिहां धणवर गुब्बर नामे गाम के ज्यां जिनेश्वरना गुण सन्मानता एवा लोको वसे छे. त्यां गौतम गोत्रना वसुजूति नामा ब्राह्मण पोतानी पृथ्वी नामा जार्या सहित वसे छे ॥ २ ॥

ताण पुत्त सिरि इंदजूइ, जूवलय सुपसिद्धो ॥ चउदह विद्या विविह रूव, नारी रस विद्धो ॥ विनय विवेक विचार सार, गुण

अने चतुर्विध संघ स्थापवो जाणी भुवनपति व्यंतर ज्योतिषी अने वैमानीक एम चारे निकायना देवो सहित पावापुरी नगरीए समोसर्या ॥ ८ ॥

देवे समवसरण तिहां कीजे, जिण दीठे मिथ्यामति खीजे ॥ त्रिभुवन गुरु सिंहासण वईठो, ततखिण मोह दिगंते पईठो ॥ ९ ॥

अर्थः—तिहां देवोए समवसरणनी रचना करी. ते देखी मिथ्यामती लोको खीजावा लाग्या अने त्रिभुवन गुरू श्रीवर्द्धमान स्वामी समवसरणमां मणिमय सिंहासन उपर बेठा. ते वेलाए मोहादि शत्रुओ दशोदिशीना अंते गया ॥ ९ ॥

क्रोध मान माया मद पूरा, जाये नाठा जिम दिन चोरा ॥ देव दुंदुहि आकाशे वाजी, धर्म नरेसर आविउं गाजी ॥ १० ॥

अर्थः—जेम दिवस उगवाथी चोरो नाशी जाय तेम केवलज्ञान रूप सूर्य उदय थये क्रोध मान माया मद आदि सकल दुष्ट कर्म रोग रूप चोरो नाठा, आकाशमां देवोए देव दुंदभी वजावी के ईश्वर एहवा जिनेश्वर मेघ गर्जनाए देशनानो

गिरि गुफामां रह्यो विराजे छे–शोभे छे वली राजा-ओना घेरे जेम हाथीउ गाजी रहे छे तेम जिन शासनमां मुनिउंमां प्रवर एहवा गौतम गुरु शोभे छे४०

जिम सुरतरुवर सोहे शाखा, जिम उत्तम मुख मधुरी भाखा, जिम वन केतकी महमहे ए ॥ जिम भूमिपति भुयबल चमके, जिम जिनमंदिर घंटा रणके, तिम गोयम लब्धे गहगहे ए ॥ ४१ ॥

अर्थ–जेम कल्पवृक्षनी शाखाओ शोभे छे वली उत्तम पुरुषोना मुखथी मधुरी वाणी शोभे छे वली जेम केवडाना वनमां केवडा सुगंधे करी महमहे छे वली जेम भूमिपतिनुं भुजवल चमके छे वली जेम जिनेश्वरना मंदिरमां घंटानो रणकार थाय छे तेम गौतम मुनि लब्धिए करी गहगहे छे ॥ ४१ ॥

चिंतामणि कर चढिंओ आज, सुरतरु सारे वंछिय काज, कामकुंभ सवि वश हुओ ए ॥ कामगवी पूरे मन कामिय, अष्ट महासिद्धि

एटले केवल ज्ञानादि अनंत लक्ष्मीनो शोजा ए प्रजुथी संपजे. प्रथम अरिहंत देवने नमीए. प्रधान विनये करी उवज्झायने सेवीए-स्तवीए. ए मंत्रे हुं गौतम स्वामीने प्रणाम करूं हुं ॥ ४३ ॥

पुर पुर वसतां कांइ करीजे, देश देशांतर कांइ नमीजे, कवण काज आयास करो ॥ प्रह उठी गोयम समरीजे, काज समग्रह तत-खण सीजे, नवनिधि विलसे तास घरे ॥४४॥

अर्थः—जूदा जूदा नगरे शा वास्ते वसीये ? वली देश देशांतर शा वास्ते नमीए ? अने कया कामने वास्ते प्रयास करीए ? ए सर्वे छोमी प्रह उठी उपरला मंत्र सहित गौतम प्रजुने समरीए तो सकल कार्य तत-क्षण सिद्ध थाय. ए मंत्र स्मरण करवावालो पोताने घेरे नवे निधिनो विलास करे ॥ ४४ ॥

चउदह सय बारोत्तर वरसे, गोयम गण-हर केवल दिवसे, किउं कवित उपगार — आदेहिं मंगळ एह पजणीजे, परव

ीरस्वामी सद्गुरुने के जेणे दिक्षा आपी. ते गौतम
गुरु विनयवंत अने विद्या भंडार जाणवा. जेना गुण
जाणवाने माटे कोई छद्मस्थ पार पामे नहीं एम
विद्यावंत गुरु कहे छे. गौतमस्वामीनो रास वांची
सकल संघने रळियात करिए तेथी रिद्धि वृद्धि
कल्याण थाय ॥ ४६ ॥ आ रासनो अर्थ श्रीमत्.
गा. मनसुखलाल हरिलाले कर्यो छे. संवत १९६५
ना पोस शुदि पंचमी.

॥ इति श्री गौतम स्वामीनो रास बालावबोध सहित संपूर्ण ॥

श्रित तुं, निरालंब अचंज सुरींदा । आपहि करता
पज कारण, आपहि कारज राग निकंदा ॥
मने० ॥५॥ संप्रदान अपादान अधिकृत, आपहि
नल ज्योति दिणंदा । नहि पर आश वास शीव
मे, व्यक्ति अखंरु अनंत अफंदा ॥ मने० ॥ ६ ॥
रशन परसन मो मन कीनो, तुंहिज साहिब में तुज
दा । पूरण शक्ते निजगुण राखुं, मनसुख शिव
र केलि करंदा ॥ मने० ॥ ७ ॥ (संपूर्ण)

पद॥ (१) घडिघडिसांजरे सांइ सलूना॥ए राग॥

शिव सुख वाणि तारी सहज वतावे, कुमत
नसावी सूमती घर लावे ॥ ए आंकणी ॥ शक्ति
अत्यंते निज गुण राखे, केवल कमला निज घर
आवे । प्रयास न त्रास न दास न परको, जो निज
गुण थिरता लय लावे ॥ शिव० ॥ १ ॥ आतम राम
रमा शीव रमतां, व्यक्ति अनंत स्वतंत जमावे ।
अखिल गुण पज्जव थीर ध्याने, आत्म रुपस्थ
अरूप लखावे ॥ शिव० ॥ २ ॥ सूनय सुत अभ्यास
करे जो, चार अनंता पूरण पावे । पर गुण पज्जव
लखि परद्रव्ये, सपज्जव गुण द्रव्ये समावे॥ शिव०॥

र संबंधे अधिक चपलता, ते तजीए दुःख खाणो॥
। ता० ॥ ६ ॥ संसारी संसरणे रींझ्या, तुं पायो निज
ाणो ॥ जवजीरू जव ताप निवारी, करि निज पद
ानमानो ॥ ता० ॥ ७ ॥ करूणाकर करूणा करी
मुजपे, तारोगे जिन जाणो ॥ आशा दासकी सफ
करो अब, मनसुख होय कल्याणो ॥ ता० ॥ ८ ॥

॥ पद ॥ (४) राग उपरनो ॥

ज्ञायक रूप हमारो केवल. अमर अजर निर्बंध
सदा ॥ वीर्य अनंत अनंत अबाधित. सह
समाधि अत्यंत मु॰ा ॥ १ ॥ एक अनेद अनु
अद्वय, और रूप नहि होय कदा ॥ ...
सकल समय निज, रम्य स्वजावाचरण सदा ॥
अन्वय रिद्धि समृद्ध हमारे, क्युं कर लूंटे जड
क्षांत्यादिक हम संगे खेले, प्रशमरति
समदा ॥ ३ ॥ जबलग निज पदमें
तबलग ममता जई दुःखदा ॥ अपनी
लखे निधि, रंगे लगी सुमता सुखदा ॥
॰नये जिन वचन विचारे, तत्त्व सुधारस
रोग शोग परतंत्र न होवे, रहे

ो तुंहिज सिद्ध गुरु ॥ सकल शक्ति तुज वचने
, तो मुज दृढ अति वीर्य खरुं ॥ क्या मन० ॥६
क जाणुं ज्ञायक देखुं, ज्ञायक पंचाचरण चरुं ॥.
वचनामृत रस जल धारे, कषाय बुझाइ कब न
॥ क्या मन० ॥ ७॥ मन वच काय त्रियोग तुज
पुं, सकल प्रमाद जय जीम हरुं ॥ तुम विण
परकी आश तजी हम, शिवमगसें पीछो न फिरुं
॥क्या मन० ॥८॥ रत्नुता छत्र धरे शिर ऊपर, निस्पृह
अमृत कलश चरुं ॥ चेतन चेतनता लहि पूरण,
अष्ट करम हणी कब न मरुं ॥ क्या मन० ॥ ९ ॥
तृप्त जयो में तुज दरिशनतें, विषय विकारमें ना-
ही परुं ॥ सहज रुप तुमतें रति राखी, पण व्रत सुमति
गुप्ति धरुं ॥ क्या मन० ॥ १० ॥ विरती रती पावे
अति मेरी, निज गुण केलि नहीं विसरुं ॥ परम
आलंबन चांह मही मुज, अवर आलंबन आश हरुं
॥ क्या मन० ॥ ११ ॥ तुमतें उलटे डुशमन जाणी,
मरम छेदि तस शक्ति हरुं ॥ ममता राग द्वेष आ-
दिककुं, काम कुतूहल चित्त न धरुं ॥ क्या मन०
॥१२॥ निज गुण पज्जवमय सवि वस्तु, धर्म शुकल शुचि
ध्यान धरुं ॥ घाती घाती चार अनंते, आतम संपत्ति

गहु दिशावमां रे ॥ जागी० ॥ कुमत ह०ाळ फ०ा-
द धारी, मोह मदिरा निंद कुशावमां रे ॥ जागी०
४॥ जड संगे जडवत हो बेठे, क्रिया एकांत चढा-
वमां रे ॥ जागी० ॥ साध्य समिप निर्मल डगधारी,
डग ज्ञान चरण सुख आवमां रे ॥ जागी० ॥ ६ ॥
अक्षय ज्ञान समुद्र जेर तव, वाणी स्याद्वाद
कहावमां ॥ जागी० ॥ शिव कमला मनसुख घर खेले,
सत्तापुर शांति जरावमां रे ॥ जागी० ॥ ७ ॥

॥ पद ॥ (७) ॥ गरबी ॥ आवजो आवजो
आवजोरे, काले वहेला निशाले आवजो ॥ ए देशी ॥

शिववर मन मंदिर आवजोरे, समकीत मित्त
साथे लावजो ॥ आवजो आवजो आवजोरे, शिववर
मन मंदिर आवजो ॥ आतम ज्ञाने समकित आवे,
मिथ्या मोह गमावजोरे ॥ शिव० ॥ विरति रति सुख
पावे हमारी, शुद्ध थिरता रंग जमावजोरे ॥शिव०॥१
पंच प्रमाद सब जाशे उजाणी, कषायनुं मूल वला-
वजोरे ॥ शिव० ॥ ध्यान शुकल सुधारस पाने, केवल
ज्योति दिपावजोरे ॥ शिव० ॥ २ ॥ गुण सजोगि लही
जवि तारी, शैलेशी करणे सुहावजोरे ॥ शिव० ॥

थय निपाईए ॥ अनंत० ॥ ४ ॥ अबोध जाय दुःख
नसाय, अमित तृप्ति पाईए । कषाय अनल जय
बुझाय, मृगमद सुशांति पाईए ॥ अनंत० ॥ ५ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ दोहरा ॥

जिन पद पूजे जे नरा, पूज्य परम पद पाय ॥
दर्वित भावित सुख लहे, कर्म कलंक नसाय ॥ १ ॥
शिव गिरिवर नर जे चढे, लहे शुद्धातम रूप ॥
अरह परह देखे नहीं, ते मूढे भव कूप ॥ २ ॥
उदासीन शेरी चले, इंत उल दृष्टि निवार ॥
दुविध दया चूके नहीं, दुष्ट विकल्प निवार ॥ ३ ॥
दया न्याय शुभ ज्ञान युत, जिन मारग लखि कोय ॥
ज्ञान दया शुभ न्याय धर, शिव पावे नर सोय ॥४॥
स्याद्वाद जिन मार्ग छे, जाणे भेद सुजाण ॥
अनेकांत लखि तत्त्वने, मुनि पावे कल्याण ॥ ५ ॥
मंगल श्रीजिन वाण छे, मंगल श्री जिन धर्म ॥
विध दया मंगल सदा, सेवि लहो शिव शर्म ॥ ६